

**THE BOOK WAS
DRENCHED**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180179

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. ^{H 891}
159k

Accession No. G.H. 3165

Author ~~तिरुपति शास्त्री, वि. व. बेंकटशास्त्री, पी.~~

Title ~~कवि-श्रीमान्द्रः तेनुगु~~ १९६२

This book should be returned on or before the date last marked below.

कवि-श्री माला

* तेलुगु *

कवि :

तिरुपति-वेंकट कवुलु

सम्पादक—अनुवादक

भीमसेन 'निर्मल'

(प्रा. भण्डारम भीमसेन जोस्युलु)

“ भारत सरकार की ओर से भेंट ”



राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशक :

मोहनलाल भट्ट

मन्त्री :

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति,

हिन्दीनगर, वर्धा



Checked 1969

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण—३०००

मई, १९६२

मूल्य—रु. २/-



मुद्रक :

मोहनलाल भट्ट

राष्ट्रभाषा प्रेस,

हिन्दीनगर, वर्धा



आमुख

हर्षका विषय है कि राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्षी अपने कार्य कालके २५ वर्ष सन् १९६१ में पूरे कर रही है। इस उपलक्ष्यमें मनाये जानेवाले रजत-जयन्ती महोत्सवके अवसर पर सभी भारतीय भाषाओंके मान्य कवियोंका तथा उनके उत्कृष्ट काव्यका परिचय 'कवि-श्री माला' की पच्चीस पुस्तकोंमें हिन्दी-गद्यानुवाद सहित प्रकाशित करनेकी योजनाके अन्तर्गत प्रस्तुत ग्रन्थ पाठकोंके समक्ष आ रहा है।

यद्यपि किसी भी भाषाके सर्वश्रेष्ठ काव्य-सर्जकका निःसृज्य करना एक कठिन कार्य है, फिर भी अपनी सीमाओंको ध्यानमें रखते हुए गण्यमान्य उन-उन भाषाओंके विद्वानोंकी रायसे ही चुनावका कार्य सम्पन्न किया गया है।

प्रत्येक पुस्तकके आरम्भमें जिस भाषाके कविकी रचनाओंका चयन किया गया है, उस भाषाके साहित्यका परिचय और कवि विशेषका परिचय दिया गया है। जिस भाषाके दो कवियोंका चुनाव किया गया है, उनका चुनाव करते समय सन् १९२० से पूर्वका साहित्य और १९२० से बादका साहित्य—इस तरहसे एक विभाजन रक्षा ध्यानमें रखी गई है। इसका कारण यह है कि लगभग सन् १९२० के पूर्वके तथा १९२० के बादके साहित्यमें प्रवाहित विचार-धाराएँ एक विशेष प्रकारका अलगाव-सा पाया जाता है।

श्री भीमसेनजी 'निर्मल' ने प्रस्तुत पुस्तकमें संकलित साहित्यको चुनने, काव्याशको सम्पादित तथा अनूदित कर सारी सामग्रीको इस रूपमें प्रस्तुत करनेमें सहयोग दिया है। पुस्तकमें संकलित चित्रका बल्लोक कविश्री काटूरि वेंकटेश्वररावजीके सद्प्रयत्नोंके फलस्वरूप 'त्रिवेणी' कार्यालय, मछलीपट्टमके सहयोगसे उपलब्ध हुआ है। संग्रहकी आवरण डिजाइनको बनवा देनेमें श्री व्ही. एन. अडारकरजी (डीन, सर जे. जे. इन्स्टीट्यूट आफ अप्लाइड आर्ट, बम्बई) का उदार सहयोग मिला है, उसके लिए समिति समीची आभारी है।

इसके अतिरिक्त छपाई तथा अन्यान्य दृष्टियोंसे जिन-जिनका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग मिला है, उनके प्रति भी समिति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है।

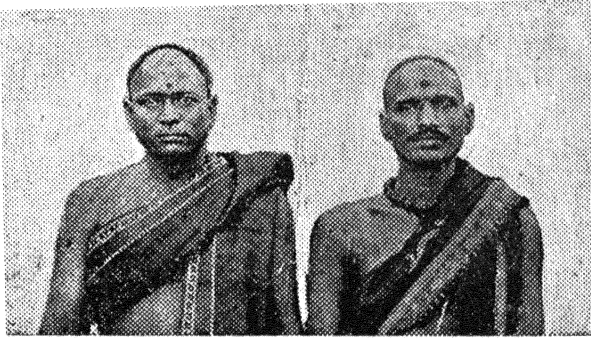
आशा है, प्रस्तुत संग्रह पाठकोंको रुचिकर एवं उपयोगी प्रतीत होगा।

हि. रा. प्र. स. मिति

सन्त्रो,
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्षी

अनुक्रमणिका

	पृष्ठांक
तमिल-साहित्य-परिचय [प्रारम्भ से १९२० तक]	१
कवि-परिचय	२५
काव्य-सञ्चय	४१



तिरुपति-वेंकट कवुलु

तेलुगु साहित्य परिचय

[प्रारम्भ से १९२० तक]

तेलुगु भाषा

और

उसका साहित्य



‘आन्ध्र’, ‘तेलुगु’, ‘तेनुगु’ नामोंसे अभिहित भाषा अेक ही है। यह भाषा संस्कृत-प्राकृत-जन्य है या द्रविड़ परिवारसे सम्बद्ध, इसपर विद्वानोंमें काफी मतभेद रहा है और अब भी है। अधिकांश विद्वानोंका मत तेलुगु भाषाको मूल द्रविड़ परिवारसे संबद्ध, मातृ-परिवारसे अन्य भाषाओंकी अपेक्षा दूरीकृत और संस्कृत-प्राकृतसे अत्यधिक प्रभावित माननेकी ओर है। परन्तु ऐसा कब हुआ और तदुपरान्त विकासका क्रम कैसा रहा, इन बातोंका परिचय प्राप्त करनेके लिअे साधन नहींके बराबर है। ११ वी शती तक की कोअी लिपिवद्ध रचना नहीं मिलती है। परन्तु कुछ लोकगीतों व शिलालेखों द्वारा तेलुगु भाषाके स्वरूपका थोड़ा-बहुत परिचय मिलता है।

आँसाकी छठी शतीके अन्तिम दशकोंमें तेलुगुमें लिखा गया एकाध शिलालेख मिलता है। उस युगकी संस्कृत एवं प्राकृत गाथाओंमें प्रयुक्त कुछ तेलुगु शब्द भाषाके विकास-परिणामपर कुछ प्रकाश डालते हैं। इन प्रमाणों द्वारा कुछ तेलुगु विद्वान इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि ईसाकी प्रारंभिक शताब्दियोंमें ही यह भाषा लोक-व्यवहारका साधन बनी हुई थी।

अध्ययनकी मुविधाके लिये तेलुगु साहित्यको छः युगोंमें विभाजित किया जाता है। (१) अज्ञात युग या प्राङ्गनन्नययुग (२) पुराण युग या अनुवाद युग (३) काव्य युग या श्रीनाथ युग (४) प्रबन्ध युग या रायलु युग (५) दक्षिणान्ध युग (६) आधुनिक युग। यह विभाजन कालके अनुसार या विशिष्ट काव्यशैलियोंके आधारपर किया गया है।

प्राङ्गनन्नय युग (सन् १०३० से पूर्व) :

आदिकवि नन्नय भट्टसे पूर्वके तेलुगु भाषा और साहित्यके स्वरूपका प्रमाणित आधार उपलब्ध न होनेके कारण, इस युगको 'अज्ञात युग' कहते हैं। इस अज्ञात युगकी भाषा और साहित्यपर प्रधानरूपसे (एकैक रूपसे भी) प्रकाश डालनेवाले साधन हैं उपलब्ध शिलालेख और लोक गीत, जो परवर्ती कवियोंसे अल्लिखित हैं। शिलालेख साहित्यका कम पर भाषा और देशी छन्दके स्वरूपका ही अधिक ज्ञान कराते हैं।^१ अिनमें ग्रामोंके नाम, प्रतिग्रहीताओंके नाम, कुछ शब्द, प्रत्यय, ध्वनियाँ और लिपि-चिन्ह-मात्र परिलक्षित होते हैं, जिनका सम्बन्ध द्रविड़ परिवारसे और विशेषकर तेलुगुसे जोड़ा जाता है। ईसाकी छठी शतीके बाद रेनाटि चोळ राजाओं और पूर्वी चालुक्य राजाओं द्वारा खुदवाअं गये शिलालेखोंमें तेलुगु भाषाका स्वरूप स्पष्ट बन गया। ये शिलालेख ही तेलुगु भाषाके लिखित रूपके सर्वप्रथम प्रमाण हैं। अिनमें कुछ केवल गद्यमें है तो कुछ पद्यमें ; और कुछ गद्यपर्यामिश्रित है। इस प्रकार इन शिलालेखोंके अध्ययनसे इस बातका पता चलता है कि इनमें पहले-पहल कुछ तेलुगु नाम और शब्द और बादमें तेलुगु वाक्योंने स्थान प्राप्त कर लिया जोर अन्तमें पूरा शिलालेख ही तेलुगुमें लिखा जानं लगा। पद्यमय शिलालेखोंमें कुछ देशी छन्दोंका भी प्रयोग हुआ है। देशी कविता या लोकगीत तो उपलब्ध नहीं हैं पर परवर्ती कवियोंके उल्लेखों द्वारा यह निश्चय किया जा सकता है कि कुछ विशिष्ट लोकगीत प्रचारमें थे।

अज्ञातयुगमें उपलब्ध सामग्री भाषा-विज्ञानके क्षेत्रकी है। विषय प्रधान शिलालेख और संदिग्ध लोकगीत साहित्यके इतिहासमें विशेष योग नहीं देते।

पुराण या अनुवाद युग (सन् १०३०-१४०० तक) :

आदि कवि नन्नयके बाद लगभग तीन शतियों तक कई कवियोंने संस्कृतके पुराणों और इतिहासोंका अनुवाद किया है। शैव कवियोंने यद्यपि कुछ मौलिक

१ ये शिलालेख प्राकृत और संस्कृतकी राजभाषा माननेवाले सातवाहन, इक्ष्वाकु, बृहत्फलायन, विष्णुकुण्डिन आदि राजवंशोंके समयके हैं। चालुक्योंके समयसे ही (७ वी शती) तेलुगुको आदर प्राप्त हो सका है।

२ सुव्यवस्थित भाषामें (जो आजतक स्टैंडर्ड माना जाता है) 'देशी' और 'मार्ग शैलियों' में एक उदात्त महाकाव्य रचना करनेसे नन्नय 'आदि कवि' कहलाए।

काव्योंकी रचना की है तथापि इनकी अधिकांश रचनाएँ अनूदित ही हैं। अतः इस युगको 'अनुवाद-युग' कहा जाता है। इस युगमें पुराणोंका अनुवाद अधिक हुआ है अतः इसे 'पुराण-युग' भी कहते हैं।

गोदावरी तीरस्थ राजमहेंद्रीको राजधानी बनाकर, आन्ध्रदेशपर राज्य करनेवाले पूर्व-चालुक्य वंशीय राजा राजराजनेन्द्र (१०१२-१०६३) की सभामें नन्नय भट्ट नामक एक महापुरुष थे। ये राजवंशके कुल-गुरु थे। साधु स्वभाववाले और वैदिक धर्ममें निष्णात इस महापुरुषने वैदिक धर्मके प्रचारके लिए, 'पंचमवेद' महाभारतके अनुवाद कार्यको सम्भाला। नन्नयने अपनी पूर्ववर्ती भापा एवं काव्य-रचना शैलीको सुव्यवस्थित रूप देकर 'आन्ध्र-वागनुशासक' की उपाधियोंके साथैक बनाया। 'जन सामान्यमें प्रचलित सभी शब्दोंका अनुशीलन एव परिष्कार कर, संस्कृत शब्दोंको तेलुगुमें प्रयोग करनेकी एक मुनिश्चित पद्धतिका निर्देश कर, धारा युक्त संस्कृत वर्णवृत्तोंको अपनाकर, उम समय तक ही उत्तम काव्य ग्रन्थोंसे सम्पन्न कन्नड-साहित्यसे समुचित प्रभाव ग्रहणकर, नन्नयने तेलुगुमें उत्तम काव्य रचनाका मार्ग प्रशस्त किया।' (डा. दिवाकर्ल वेंकटावधानी।)

अपने प्रभु और मित्र राजराजकी प्रेरणासे, महाभारतके ढाई पर्व तक ही रचना कर पाए कि काल पुरुषने इनकी लेखनी रोक दी। अग्रण्य पर्वमें १४२ वाँ पद्य जो नन्नयका अन्तिम पद्य माना जाता है, इस प्रकार है:—

“शरद् रात्रुलुज्ज्वल लसत्तर तारक हार पंकतुन्
जःरुतरंबुल्यथे विकसन्नव कैरव गद्य बन्धुरा
दार समीर सौरभमुदालिच सुधांशु विकीर्षमाण
कर्पूर पराग पांडुरुचिपूरमुलं बरिपूरितंबुल्यथे।”

(शरद् ऋतुकी राते उज्ज्वल और श्रेष्ठ तारक-हार पकितियोंसे मुन्दरतर हुई। नवविकसित कैरव पुष्पोंकी सुगन्धसे भारान्वित होनेवाले समीरके सौरभसे और चन्द्रके विश्वरे किरण रूपी कर्पूर-परागकी श्वेत-रुचियोंसे परिपूर्ण बनी वे राते।)

नन्नयकी रचनाका दृष्टिकोण काव्य परक है और उनके अनुवादकी शैली स्वच्छन्द है। अतः उन्होंने मूल इतिवृत्तको काव्य-रचनाके अनुकूल कही घटाकर कही बढ़ाकर, औचित्यकी दृष्टिसे कुछ परिवर्तन कर, मौलिक काव्यके रूपमें प्रस्तुत किया है। नन्नयकी कविता 'प्रसन्न-कथा-कलितार्थ युक्ति', 'अक्षर-रम्यता' 'नाना रुचिरार्थ युक्ति' आदि विशिष्टताओंसे सम्पन्न तथा संस्कृत-समास-बहुला होनेपर भी, अनव्य-सुलभ होकर, परवर्ती कवियोंके लिए मार्गदर्शक सिद्ध हुई। वचन (गद्य)^३ रचनानामें भी नन्नयकी शैली आदर्श है। 'नरके लिए नारायणके समान' नन्नयके सहयोगी नारायण भट्टु नामक एक उद्भट पंडित थे।

३ तेलुगुके काव्योंमें प्रारम्भसे ही प्रवाह युक्त वचन-रचना होती थी।

‘चामुंडिका विलास’, ‘आन्ध्र शब्द चिन्तामणि’, ‘इन्द्र विजय’, ‘लक्षण-सार’ आदि ग्रन्थ भी नन्नयके लिखे माने जाते हैं। ‘आन्ध्र शब्द चिन्तामणि’ तेलुगुका पहला व्याकरण है जिसमें संस्कृत सूत्रोंमें तेलुगुके व्याकरण नियमोंका विवरण है। पर नन्नयकी कीर्तिका वास्तविक मूल तो महाभारतकी रचना ही है।

राजराजनरेंद्रकी मृत्युके बाद देशकी राजनैतिक और धार्मिक परिस्थितियोंके कारण ‘महाभारत’ की पूर्णिका कार्य रुका-सा रहा। रचनाओंके न मिलनेपर भी इस समय एक प्रसिद्ध कवि हैं—वेमुलवाड भीमकवि। प्राप्त मुक्तकोसे ही प्रतीत होता है कि ये बड़े ही पंडित, कवि और शापानुग्रह समर्थ थे। पावलूर मल्लनने संस्कृतमें वीराचार्य द्वारा लिखे गए गणितशास्त्रका पद्यानुवाद किया है।

नन्नयके लगभग डेढ़ सौ साल बाद कविव्रह्मा तिवकनने (१२१०-१२९०) विराट-पर्वसे लेकर शेष १५ पर्वोंकी रचना की। तिवकनने पहले ‘निर्वचनोत्तर रामायण’ की रचना की, तदुपरान्त यज्ञकर सोमयाजि बने। तब ‘हरिहर-अद्वैत-भाव’ को प्रतिपादित करते हुए, महाभारतकी रचना कर उसे आपने इष्ट भगवान हरिहरनाथको ही समर्पित किया। तिवकन, नेल्लूर के राजा मनुमसिद्धिके मन्त्री तथा राजकवि थे।

अनुवादमें तिवकनने नाटकीय शैलीका प्रयोग किया। जीवनके स्वाभाविक प्रसंगोंकी उद्भावना कर, उन-उन पात्रोंके वार्तालाप एवं विकास-क्रम द्वारा उनकी मानसिक प्रवृत्तियोंका चित्रण करते हुए, चित्तवृत्तियोंके परिणाम एवं परिष्कारका दिग्दर्शन कराना ही काव्यमें नाटकीय शैलीका प्रधान लक्षण है। रसानुभूति द्वारा पाठकके चित्तको परिष्कृत करनेका यह श्रेष्ठ-मार्ग है। ‘कीचक वध’ इस दृष्टिकोणसे अत्युत्तम उदाहरण है, इसमें कविने कथाकी एक नाटकके रूपमें प्रस्तुत किया है। उद्योग पर्वमें राजनीतिके दौंव-पंचोंका अद्वितीय चित्रण है। पात्रोंका इतना सुस्पष्ट चित्रण और किसी काव्यमें नहीं मिलता। युद्ध वर्णनमें तो दृश्य वर्णन चलचित्र की तरह गतिमान बन पड़े हैं। वर्णनात्मक न होकर, संवाद शैलीमें काव्य रचनामें तिवकन अत्यन्त सफल हुए हैं। लम्बे-लम्बे समासोंका अभाव, देशी शब्दोंका—ठेठ तेलुगु शब्दोंका—सुन्दर प्रयोग, ये तिवकनकी रचनाको सुन्दर बनाते हैं। “संस्कृत-भारती सोनेका ढेर है। उसमेंसे समुचित मात्रामें स्वर्ण लेकर, स्वर्णकारकी कुशलताके साथ बनाया गया स्वर्ण-कमल है तेलुगु-भारत।”

अरण्य पर्वके शेष भागकी पूर्ति, नन्नयके नामपर ही करनेवाले हैं एरप्रगड (१२८०-१३५०)। इन्होंने नन्नयकी शैली पर रचनाका प्रारम्भ करके उसे तिवकनकी शैलीपर ला खड़ा किया। इससे ऐसा लगता है मानों ये नन्नय और तिवकनकी रचनाओंको मिलानेवाले सन्धि-सूत्र हैं।

‘स्फुरदरुणांशु रागरुचि बोंपिरि वोयि निरस्त नीरदा
वरणमुलै, दलत्कमल वैभव जूम्भगमु ल्लसिल्लनु
द्धरतर हंस सारस मधुव्रत निस्वनमुञ्ज सेलंगगा
गरमुर्वेल्लो, वासरमुखंबुलु शारदवेल जूडगन ।’

(शरद् ऋतुके दिनोंमें प्रकाशमान सूर्यकी अरुणिमा घट गई। नीरद-
आवरणसे मुक्त हो, कमलोंके वैभव-विकासके नष्ट होनेपर, हंस, सारस और मधुव्रतों
(भ्रमरों) के स्वरोंके मुन्वरित होनेपर, शरदके दिन प्रकाशित होने लगे ।)

नन्नय भट्टके पद्यसे इसकी तुलना करनेपर स्पष्ट रूपसे मालूम होता है
कि नन्नयकी शैलीसे इनकी शैलीका कितना साम्य है। अरण्यपर्वके शेष भागकी
रचनाके अतिरिक्त एर्राप्रगड़ने ‘नृसिंह पुराण’, ‘रामायण’, ‘हरिवंश’ आदि
काव्योंकी रचना की है।

नन्नय, तिवकन और एर्राप्रगड़ इन तीन कवियोंको ‘कवित्रय’ कहते हैं।
इन तीनों महाकवियोंने अनुवादको औचित्यकी दृष्टिसे, ठेठ तेलगु माँचिमे ढालकर
एक नूतन काव्यकी ही रचना की है, जिसे किसी मौलिक काव्यसे कम गौरव प्राप्त
नहीं है। कवित्रयके हाथोंमें पड़कर ‘महाभारत’ ने तेलगु जन-मनके हृदयमें घर
कर लिया है। ‘कवित्रय’ की रचना शैली हीं परवर्ती कवियोंके लिए मार्गदर्शक
बनी रही।

इस युगके अन्य कवियोंमें केतन, मारन्न, गोन बुद्धा रेड्डी, हुळविक भास्कर
पेद्दन, नाचन सोमनाथ प्रमुख हैं। केतनने दंडीकृत ‘दश कुमार चरित’ को चम्पू
काव्यके रूपमें अनूदित कर, तिवकनके करकमलोंमें समर्पित किया। ‘विज्ञाने
श्वरीयमु’ (‘धार्मिक ग्रन्थ’) और ‘आन्ध्र भाषा भूषणमु’ (व्याकरण ग्रन्थ) इनकी
अन्य रचनाएँ हैं। तिवकनके शिष्य मारन्नने ‘मार्कंडेय पुराण’ का अनुवाद किया
है। गोन बुद्ध रेड्डीने अपने पिताके नामपर, रामायणको द्विपद-छन्दमें रचा है।
एक प्रवाद है कि रंगनाथ नामक किसी कविने इसकी रचना की है। वैसे यह काव्य
‘रंगनाथ रामायणमु’ के नामसे हीं प्रसिद्ध है। इस काव्यमें जवुमालि, कालनेमि
सती मुलोचना आदि अवाल्मीकीय प्रसंग हैं जो मूलकथाके सौन्दर्यमें चार चाँद लगाते हैं।
ऐसा प्रतीत होता है कि ये उपकथाएँ गायद आन्ध्रके लोकगीतोंके प्रभावसे, काव्यमें
आई हैं। इस काव्यके वर्णन बड़े ही गम्भीर, पात्रोंका शीलचित्रण सुन्दर और
शैली गेय बन पड़ी है।

‘भास्कर रामायण’ के कर्ता हुळविक भास्कर, उनके पुत्र मल्लिकार्जुन
भट्ट, शिष्य कुमार रुद्रदेव, मित्र अय्यलार्य माने जाते हैं। स्वाभाविक प्रवाहसे
युक्त होनेपर भी काव्यमें, अनेक कर्तृत्वके कारण, समग्र ग्रन्थमें अक-सी शैली
नहीं है। शैलीकी भिन्नता स्पष्ट परिलक्षित होती है।

विन्नकोट पेद्दनेके 'काव्यालंकार चूड़ामणि' में साहित्यिक विषयोंके साथ-साथ व्याकरण और छन्दकी भी चर्चा की गई है। राजशेखर कविके 'विद्वसाल-भंजिका' के आधारपर मंचनने 'केयूरबाहु चरित्रमु' की रचना की। 'नाचन सोनमाथ' का 'उत्तर हरिवंशमु' ही उपलब्ध है। इस एक काव्यके आधारपर ही इन्होंने 'कवित्रय' के कवियोंके समकक्ष माना जाता है। वस्तु की एकता, रसपोषण, नूतन प्रसंगोंकी कल्पना और निर्वाह, भाव, पांडित्य आदि कई गुणोंसे युक्त यह काव्य प्रबन्ध युगकी रचनाओंका मार्गदर्शक है।

आचार्य अधर्वणकी गणना इस युगके पंडित कवियोंमें की जा सकती है। इनका लिखा 'महाभारत' उपलब्ध नहीं है। 'अधर्वणकारिकावलि' के नामसे तेलुगु व्याकरण, संस्कृत श्लोकोंमें लिखा है।

वद्वेनका 'नीतिमार मुक्तावलि', अमरेश्वरका 'विक्रमसेन काव्यमु', त्रिपुरान्तकका 'त्रिपुरान्तकोदाहरणमु' इस युगके अन्य काव्य हैं। उदाहरण काव्यों में 'त्रिपुरान्तकोदाहरणम्' का शीर्ष स्थान है।

इस युगमें शैव कवियोंका अपना विशिष्ट महत्व है। ईसाकी लगभग ११-१२ वीं शताब्दीमें कर्नाटक प्रान्तमें वमवेश्वर द्वारा संस्थापित 'वीर शैव संप्रदाय' ने आन्ध्रदेशको खूब प्रभावित किया। उन सिद्धान्तोंके प्रचारके लिए अनेक कवियोंने कलम उठाई। देशी इतिवृत्त, देशी छन्द, और देशी भाषा—इन्होंने साधन बनाकर वीरशैव कवियोंने जनतामें जागरणके भाव फैलाए। इन कवियोंने भाषा और भावके क्षेत्रमें अत्यधिक स्वच्छन्दता दिखाई है। सचमुच इन्होंने 'जन-कवि' कह सकते हैं।

इन शैव कवियोंमें राजकवि 'नन्नचोड' का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। इनके समयके वारेमें काफी मतभेद रहा है। 'कविराज शिखामणि' की उपाधिसे शोभित नन्नचोडने 'कुमारसम्भवमु' नामक उत्तम प्रबन्ध काव्य की रचना कर, अपने गुरु जंगम मल्लिकार्जुनको समर्पित किया। काव्यके प्रारम्भमें कालिदास, उद्भट नामक दो संस्कृत कवियोंके उल्लेख होनेपर भी यह काव्य किसीका अनुवाद नहीं है। इस काव्यके वर्णन सहज सुन्दर और शैली गम्भीर है। रचनाशैलीके कारण इस काव्यको तेलुगुका पहला प्रबन्ध काव्य माना जा सकता है।

मल्लिकार्जुन पंडिताराध्यके लिखे अनेक काव्योंमेंसे 'शिवतत्वसारमु' ही उपलब्ध है। इसमें शिवा!, अजा!, रुद्रा!, महेशा!, के संबोधनात्मक मुकुटों

४ एक विशिष्ट प्रकारका काव्यभेद है, जिसमें विभक्तियोंके क्रमसे पद्य होते हैं।

५ शतकमें सभी पद्योंके अन्तमें संबोधन एक जैसा होता है।

पर सैकड़ों पद्य हैं। यह तेलुगुका पहला शतक है। इस ग्रन्थमें पाशुपत शैव सिद्धान्त और शिवदीक्षाका विस्तारपूर्वक वर्णन है।

द्विपद रचनामें अनन्य और शिवकविसमूहके शिरोमणि पालकुरिकि सोमनाथने आन्ध्र, संस्कृत, और कन्नड़ भाषाओंमें अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। इनमेंसे 'बसव पुराणम्', 'पडिताराध्य चरित्रम्', 'सोमनाथस्तव', 'अनुभवसार', 'वृषाधिप शतकम्', और 'बसवोदाहरणम्' अपेक्षाकृत प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। शिवपारम्यको सिद्ध करनेवाली अनेक प्रसिद्ध कथाएँ, इन ग्रन्थोंमें हैं। सोमनाथकी कवितामें अद्वितीय प्रवाह है, जिसकी तुलना 'गिरिनदी' (जलप्रपात) से की गई है। द्विपद छन्दको लोकप्रिय बनानेवाले, और वीर शैवके सिद्धान्तको जनता तक पहुँचानेवालोंमें सोमनाथ ही सर्व प्रथम हैं।

इस युगमें ही जिसे प्रारम्भिक (आदि) युग कहा जाता है—'भार्गव कविता' और 'देशी कविता' के नामसे उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं कि इस युगको साहित्यकी प्रारम्भिक दशा माना नहीं जा सकता। एकाध देशी रचनाको छोड़ अन्य सभी अनुवाद ही हैं, पर ये अनुवाद नीरस न होकर, मौलिक रचनाओं जैसे लगते हैं। गोदावरी तीरस्थ राजमहेंद्रीमें उद्भूत आन्ध्र कविताकी स्रवन्ति नेल्लूरु, वरंगल, अहंकि आदि स्थानोंमें फैल पड़ी और समग्र आन्ध्र प्रान्तको अपनी निर्मल धाराओंसे तृप्त करने लगी।

श्रीनाथयुग या काव्य युग (सन् १४००—१५०० तक):

एग्रेगड़के बाद पुगणोके अनुवादकी ओरसे ध्यान हटकर काव्य रचना, यदाकदा मौलिक काव्य रचना की ओर दृष्टि गई। १५ वी शतीसे १७ वी शती तक आन्ध्र साहित्यका स्वर्णयुग माना जाता है। १५ वी शतीको प्रबन्ध पूर्व युग कहते हैं या 'श्रीनाथ युग'। इस युगके साहित्याकाशमें जाज्वल्यमान सूर्यके समान कवि सार्वभौम श्रीनाथ विराजमान हैं तो भक्तिमाधुर्यकी शीतल ज्यात्स्ना विश्वरनेवाले सुधाकर हैं महाकवि पोतन्न। दोनोंने अपनी-अपनी रचनाओंसे प्रबन्ध युगके बीज बोए।

इस युगके युगपुरुष हैं, महाकवि श्रीनाथ। इस कवि सार्वभौमका जीवन-काल ई. सन् १३८०-१४६० तक माना जाता है। ये अपने मौलह्वें सालसे ही लिखने लग गए और मृत्युपर्यंत लिखते ही रहे। अत्यन्त विलासी और वैभवशाली जीवन वितानके बाद इनके जीवनके अन्तिम दिन दुखद रहे।

श्रीनाथकी रचनाओंमेंसे 'शृंगार नैपथ', 'भीमखंड', 'काशी-खंड', 'हर विलास', 'क्रीडाभिराम', 'पल्लटाटि वीर चरित्र' आदि रचनाएँ प्राप्त हैं 'महत्तराट् चरित्र', 'शालिवाहन सप्तशति' और 'पडिताराध्य चरित्र' आदि

रचनाएँ उपलब्ध नहीं हैं। स्वच्छन्द प्रकृतिके इस महाकविने अपनी रचनाओंमें अप्रतिम प्रतिभाका प्रदर्शन किया है। अनुवादोंमें भी मूल इतिवृत्तको ऐसा चमका दिया है कि वे मौलिक-काव्यसे लगने लगे हैं। पांडित्यपूर्ण प्रौढ़ शैलीके साथ-साथ देशी रचनामें भी आप सिद्धहस्त हैं। 'विद्वदौषध' माने गए 'नैषध' और 'अयःपिंड' माने गए 'काशी खंड' की रचना करनेवाले इस कविवरने द्विपद नामक देशी गेय छन्दमें 'पलनाटि वीर चरित्र' की रचना की। 'सीसमु' नामक देशी छन्दके आप मास्टर माने गए हैं। विभिन्न अवसरोंपर कहे गए इनके मुक्तक बहुत प्रसिद्ध हैं। एक उदाहरण लीजिए :—

सिरिगलवानिकि जेल्लुनु
तरुणुल बदियारुवेल दगबंड्लाडन्
दिरिपेमुन किट्टरांडा
परमेशा ! गंगाविडुवु पार्वति चालुन् ।'

(गुन्टूर जिलेके पलनाडु इलाकेसे जहाँ पानीका अत्यन्त अभाव है, जाते हुए श्रीनाथने कहा—श्री संपत्तिवालेका १६ सौ स्त्रियोंसे विवाह कर लेना समुचित है। पर भिखारीके दो दो स्त्रियाँ क्यों?—हे शंकर ! तुम्हारे लिए पार्वती बस है, गंगाको छोड़ दो न !)

इस महाकविने आन्ध्र देशके प्रत्येक राज दरवारमें अनन्य गौरवको प्राप्त किया। यही नहीं बल्कि रेड्डी राजाओंके यहाँ तो इनका कनकाभिषेक भी हुआ था। तेलुगु साहित्यके इतिहासमें इतना विलासी और वैभवशाली व्यक्तित्व किसी दूसरे कविका नहीं हुआ। श्रीनाथकी कविता 'हरके जटाजूटसे त्रिनिर्गत गंगा-तरंगोंकी भाँति' अविरल वेग तथा पवित्र वाग्धारा लिए हुए है, जिसमें अवगाहन करनेपर पाठकका मन परितृप्त हो जाता है।

महान् भक्त और महाकवि वस्मेर पोतन्न श्रीनाथके सम सामयिक ही नहीं, रिश्तेमें साले माने जाते हैं। इस रिश्तेपर आधारित कई गाथाएँ लोक-प्रचारमें हैं। पोतन्नने श्रीमद्भागवतके अतिरिक्त 'भोगिनी दंडकमु' और 'वीरभद्र विजयमु' नामक दो अन्य काव्योंको भी रचा है। संस्कृतमें २० हजार ग्रन्थोंमें परिव्याप्त महाभागवत पुराणको पोतन्नने ३० हजार पद्योंके महाकाव्यके रूपमें ढाला है और श्रीरामचन्द्रजीके चरण कमलोंमें समर्पित किया है। 'निजदार मुतोदर पोषण' के लिए अपनी काव्य कन्याको अधम नरेशोंके हाथ न बेचकर ये महात्मा जीवनभर हल चलाते रहे। एक बार इन्होंने कहा :—

'बालरसालसाल नवपल्लव कोमल काव्य कन्यकन्
कळलकम्मि यप्पडुपु गूडु भुजिचुट कंटे

सत्कवुल् हालिकुलैन नेमि ? गहनांतर सीमल कन्दमूलकौ
हालिकुलैन नेमि ? निजदारसुतोदर पोषणार्थमै ।'

(बालरसाल (आम्र) वृक्षके नव पल्लव-सी कोमल काव्य-कन्याको नीचोंके हाथ बेचकर, (वेश्यावृत्ति-सी) उस भोजनको खानेकी अपेक्षा, अपने बाल-बच्चोंके पेट भरनेके लिए, सत्कवि किमान वनें तो क्या हुआ ? जगलोंमें कंदमूल खोद लें तो क्या हुआ ?)

'आन्ध्र महाभागवन' भक्ति और माधुर्यका आकर है। साहित्यिक महत्त्वके साथ लोकप्रियतामें भी इस काव्यका साना नहीं है। अनन्य भक्तिका निरूपण करनेवाला यह पद्य, ऐसे पद्योंमेंसे एक है जो सामान्य जनताकी जवानपर है।

मंदार मकरंद माधुर्यमुन देलु
मधुपंबु वोवुने मदनमुलकु ?
निर्मल मंदाकिनी वीचिकल दूगु
रायंच जनुने तरंगिणुलकु ?
ललित रसाल पल्लव खादियै चोवकु
कोयिल सेरुने कुटजमुलकु ?
पूणेंदु चंद्रिका स्फुरित चकोरंक
बरुगुने सांद्र नीहारमुलकु ?
अंबुजोदर दिव्य पदारविद
चितनामृत पान विशेष मत्त
चित्तमेरीति नितरंबु जेरनेर्चु
विनुतगुणशील ! माटलुवेयुनेल ?

(मंदार पुष्पोंके मकरंदके माधुर्यका स्वाद लेनेवाला भ्रमर नीमके पेड़ोंकी ओर जायेगा ? (कभी नहीं) । मन्दाकिनीकी निर्मल वीचिकाओंपर डोलने-वाला राजहंस कभी छोटे नदी-नालोंमें जायेगा ? कोमल आम्र-पल्लवोंपर मुग्ध होनेवाली कोयल क्या मामूली वृक्षोंके पास जायेगी ? पूर्णिमाके उज्ज्वल चन्द्रकी शीतल किरणोंको खानेवाला चकोर क्या आम्रकी वंदोंपर रीझेगा ? इमी प्रकार श्री विष्णु भगवानके चरण-कमलोंकी सुधाके पानसे मत्त-चित्त, दूसरे विषयोंपर कैसे आसक्त होगा ?)

कुछ कारणोंसे पोटन्नके भागवतके कुछ भाग नष्ट हो गए। उन भागोंको एर्चूरि सिगन, गंगन और वेलिगंदल नारय ने पूरा किया।

इस युगमें इन दोनों मूर्धन्य कवियोंके बाद पिल्ललमरि पिन वीरभद्रका स्थान है। इनके लिखे काव्य-ग्रन्थोंमें 'शृंगार शाकुन्तलमु' और 'जैमिनी भारतमु'

ही प्राप्त है। व्यास और कालिदास की रचनाओंके आधारपर इन्होंने शकुन्तलाकी कथाको चार आश्वसों के प्रबन्ध काव्यका रूप दिया है। इस काव्यमें इतिवृत्तका विकास-क्रम 'अभिज्ञान शाकुन्तल' के आधारपर है तो उसके परिणामकी कल्पना 'महाभारत' के अनुरूप है। 'जैमिनी भारत' का अश्वमेध पर्व ही प्रचारमे है। पितृवीर्यने उसी भागको ग्रहण कर, अनेक उपकथाओंको जोड़कर, प्रौढ़ काव्यकी रचना की है।

ज्वकनका 'विक्रमार्क चरित्रमु' अनन्तामात्यका 'रसाभरणमु', 'अनन्तका छन्द', और 'भोजराजीयमु', गौरनका 'हरिश्चन्द्रोपाख्यानयमु' और 'नवनाथ चरित्रमु' मंडिकमिगनका 'पद्मपुराणमु' और 'सकल नीति सारमु', दग्गुपल्लि दुग्गनका 'नचिकेतोपाख्यानमु' 'कोरवि गोपराजुका 'सिंहासन द्वात्रिंशति', दूवगुंट नारायण कविका 'पंचतन्त्रमु', वेन्नेलकटि सूरनका 'विष्णु पुगणमु' आदि अन्य प्रसिद्ध काव्य है।

नंदि मल्लय और घट सिगन आन्ध्रके सर्वप्रथम कवि-युगके वे कवि है जिन्होंने 'प्रबोध-चन्द्रोदयमु' और 'वराह-पुराणमु' की रचना की। सर्कित्तोमे-गेय पदोमे— भगवान् वेकटेश्वरका स्तवन करनवाले ताल्लपाक अन्नमाचार्य भी इसी युगमे हुए है। आन्ध्रके 'कबीर' वेमन्नने अत्यन्त सरल और सुबोध शब्दोमे समाजमे फैली रूढ़िवादिताका खड़न कर मानवताके स्वरको ऊँचा किया :—

‘मालवानि नेल मरि मरि निदिपंगा
नोडलु रत्तमांस मोकटि गदे
वानिलोन मेलगु वानि कुलंबेदि
विश्वदाभिराम विनुर वेसा !

(वर्ण-व्यवस्थाकी निन्दा करते हुए वेमन्न कहते हैं कि हरिजन (पंचम) की बारबार निन्दा क्यों करते हो? शरीर, रक्तमांस आदि सभी एकसे नहीं है? उसके अन्दर रहनेवाले परमत्वका वर्ण कौन-सा है? अर्थात् बाहरी भेद व्यर्थ है।)

वेमन्नके हजारों पद्य है जिन्हें 'वेमन्न शतकमु' कहते हैं। भाव और भाषाकी अकृत्रिमताके कारण वेमन्नकी लोकप्रियता आजतक अक्षुण्ण है।

आन्ध्र साहित्यके इतिहासमें काव्य प्रक्रियाओंके वैविध्यके लिए इस युगका विशिष्ट स्थान है। कवियोंकी दृष्टि रस सृष्टिकी अपेक्षा रचना-कौशल और शैलीपर अधिक केन्द्रित होने लगी। लम्बी समास रचना, यमक आदि शब्दालंकारोंका अधिकाधिक प्रयोग होने लगा।

राजमहेंद्री, अहंकि, विद्यानगर, ओरुगल्लु (वरंगल), कोंडवीडु आदि नगर कविता-कन्याके क्रीड़ा-स्थल बने रहे।

रायलु युग या प्रबन्ध युग (ई. सन् १५००-१७००) :

‘काव्य युग’ का अन्तर भाग ही प्रबन्ध युग है। काव्ययुगमें प्रबन्ध रचनाकी जिन विशिष्टताओंका सूत्रपात हुआ, उनको इस युगके कवियोंने पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया। ख्यातवृत्त और कल्पित वृत्तोंको लेकर, अष्टादश वर्णनयुक्त अनेक मौलिक प्रबन्ध काव्योकी रचना हुई। बहुमुखी तथा परमोज्ज्वल साहित्यिक कृतियोंसे सम्पन्न इसी युगमें तेलुगुके पंच महाकाव्यों का निर्माण हुआ है।

आन्ध्र साहित्यमें ‘प्रबन्धकाव्य’ का विशिष्ट अर्थ है। “गद्य-पद्य-कथन-संवादात्मक समस्त काव्य भेदोंको अपनेमें समेटे हुए, सम्पूर्ण शिल्पमूर्ति है प्रबन्ध-सरस्वती।” (श्री पिगली लक्ष्मीकाता।) संस्कृतमें ‘महाकाव्य’ की परिभाषा और लक्षणोंके अनुरूप ही प्रबन्धके स्वरूपका त्रिवर्ण दे सकते हैं। एक नायकाश्रय, वस्तुकी एकता, अष्टादश वर्णन, शृंगार रसकी प्रधानता, आलंकारिक शैली, मौलिकता आदि लक्षणोंमें युक्त काव्यको ‘प्रबन्ध-काव्य’ कहते हैं। “भारतमें वीज प्राय, एरंनमें अकुरित और सोमनमें पल्लवित यह प्रबन्ध लता श्रीनाथके हाथमें बढकर खूब पल्लवित हुई। यह लता रायलु युगमें ही फलोंसे लदी। ‘मनुचरित्र’ उस लताका प्रथम पुष्प-फल है।”

विजयनगरके महाराजा श्रीकृष्ण देवराय (१५१०-१५३०) की ‘भुवनविजय’ नामक मभा आन्ध्र साहित्यके प्रसिद्ध कवियोंसे मुशोभित थी। श्रीकृष्ण देवराय स्वयं कवि और पंडित थे। संस्कृत ग्रन्थोंके अतिरिक्त इन्होंने तेलुगुमें ‘आमुक्तमाल्यदा’ की रचना की। इसमें गोदादेवी या आडालके भगवान विष्णुसे विवाहकी कथाका वर्णन बड़ी ही प्रौढ़ एवं पंडिताऊ शैलीमें किया गया है।

आन्ध्र प्रबन्ध कविताके पितामह अल्लसानि पेद्दने ‘मनुचरित्र’ या ‘स्वागेचिप मनुमंभव’ नामक श्रेष्ठ प्रबन्ध काव्यकी रचनाकी। शृंगार रस प्रधान यह काव्य, चरित्रचित्रण, प्रकृतिके मनमोहक वर्णन, शब्दचयन एवं आलंकारिक शैलीमें अपना मानी नहीं रखता। इनकी प्राजल शैलीका एक उदाहरण देखिए:—

‘अटजनि गांवे भूमिसुहडंबर चुम्बि शिरस्सरज्जरी
पटल मुहुर्मूहुल्लूठदभंगतरंग मूदंग निस्स्वन
स्फुट नटभानुकूल परिफुल्ल कलापकलापि जालमुन
गटक चरुत्करेणु करकपित सालमु शीतशैलमुन ।

८ मनुचरित्र, वमुचरित्र, प्रभावनी प्रद्यूमनमु, आमुक्तमाल्यदा, पाडुरंग
माहात्म्यमु।

(वहाँ (हिमालय पर) जाकर, आकाशको चूमनेवाले शिखरोंसे निःसृत झरनोंके समूहके चचल तरंगोंके शब्दोंको मृदंगके स्वर मान, पंख फैलाकर नाचनेवाले मयूरोंके समूहसे युक्त और पर्वतोंमें विचरनेवाले हथिनियोंके सूँडोंसे हिलाए जाने वाले वृक्षोंवाले शीताचलको उस ब्राह्मणने देखा ।)

‘भुवन विजयके आठ प्रसिद्ध कवियोंमें (अष्टदिग्गज) पेद्दन सचमुच ‘पेद्दन’ बड़े माने जाते हैं। रायलुने इनका जैसा सम्मान किया वैसा सम्मान ससारके शायद ही किसी और कवि को मिला हो।

मादय्यागारि मल्लनका ‘राजशेखर चरित्रमु’, नंदितिम्मनका ‘पारिजाता-पहरणमु’, घूर्जटि कविका ‘काळहस्तिमाहात्म्यमु’ और ‘काळहस्तीश्वर शतकमु’ नृसिंह कविका ‘कविकर्णरसायनमु’, ताल्लपाक चिन्नन्नका ‘परमयोगिविलासमु’ और ‘उषा परिणयमु’, अय्यलराजु रामभद्र कविका ‘रामाभ्युदयमु’, तेनालि रामकृष्णका ‘पांडुरंग माहात्म्यमु’ आदि प्रसिद्ध काव्य हैं।

कहते हैं, नासिकापर लिखे गए निम्न लिखित सुन्दर पद्यके कारण नंदितिम्म ‘मुक्कु (नाक) तिम्मन्न’ के नामसे प्रख्यात हुए।

“नानासूनवितान वासनल नानादिचु सारंगमे
लानन्नोल्लदटंचु गंधफलि बलकाकं दपंबदियो
षा नासाकृति वूनि सर्वसुमनस्सौरभ्य संवासमै
पूने ब्रक्षणमालिका मधुकरीपुंजबुनिर्वकलन् ।’

(विविध पुष्पोंकी सुगंधियोंसे प्रसन्न होनेवाला भ्रमर मुझे क्यों नहीं चाहता ? इस क्रोधके मारे घोर तप कर, चंपा पुष्प, स्त्रीकी नासिका बन गया। तब सब प्रकारके सुमनोंके सौरभके योग्य बन उसने वीक्षणमालिकारूपी मधुकरीसमूहको अपने दोनों तरफ रखलिया।)

नंदितिम्मन्नके पारिजातापहरण काव्यमें श्रीकृष्णकी महिषी सत्यभामाके प्रणय-मानका हृदयंगम वर्णन किया गया है। श्रीकृष्णपर क्रुद्ध होकर सत्या उन्हें लात मारती है तो कवि कहता है:—

‘जलजातासन वासवादि सुरपूजा भाजनंबै तन
चुंलतांतायुधु गन्नतंङ्गि शिरमच्चो वामपादंबुनन्
तोलगंद्रोसे लतांगि यट्लयगु नाथुल् नेरमुल्सेय पे
रलुकन् जेंदिनयट्टि कान्तलुचित व्यापारमुल्नेतुरे ?’

(ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवताओंसे पूजित, मन्मथके जनक (श्रीकृष्ण) के सिरको बाएँ पैरसे ढकेल दिया। वैसा होना स्वाभाविक ही है क्योंकि प्रियके अपराध करनेके कारण क्रुद्ध होनेवाली प्रियाको, ‘उचित-अनुचितका विचार कहाँ रहता है’)

पिंगलि सुरन्न इस युगके अनन्य प्रतिभाशाली कवि हैं। इन्होंने ‘कलापूर्णे-दयमु’ और ‘प्रभावात पद्युम्नमु’ नामक दो प्रबन्ध काव्य और ‘राघवपांडवीयमु’

नामक द्वयर्थि काव्यकी रचना की है। 'कल्पपूर्णादयमु' कविकी भावुक कल्पना और अद्भुत-कथा-निर्वाह-कौशलका ज्वलन्त प्रमाण है। मानों यह एक पद्यात्मक उपन्यास ही है। 'राघवपांडवीयमु' मे समग्र काव्यके प्रत्येक पद्यमे, रामायणपरक तथा भारतपरक, दोनों ओर लगनेवाले अर्थ मिलते है। गद्यश्लेष और अर्थश्लेषके सहारे, दो भिन्न कथाओंका निर्वाह करना कवि की बौद्धिक प्रतिभा तथा उद्भट पांडित्यका प्रमाण है।

सचमुच ही कृष्णदेवरायका युग आन्ध्रमरुस्वतीके लास्यके अनुकूल क्षेत्र रहा है। महापराक्रमी एवं कभी भी पराजित न होनेवाले उस महाराजने राज्यलक्ष्मीकी अपेक्षा साहित्यलक्ष्मीकी ही अर्चना की है।

रामराजभूषणकवि श्रीकृष्णदेवरायके दामाद रामराज (तल्लिकोट सन् १५६४-१५५६ के युद्धके प्रसिद्धवीर) के दरबारमें थे। इन्होंने 'वसुचरित्र' नामक श्लेष-काव्य, 'हरिश्चन्द्र नलोपाख्यानमु' नामक द्वयर्थि काव्य और 'नरस भूपालीयमु' नामक लक्षण ग्रन्थकी रचना की है। रामराज-भूषण कवि उच्च कोटिके कवि, पंडित और आचार्य थे।

तेलुगु साहित्यकी सर्वप्रथम कवयित्री आत्मकूरिमोल्ल भी इसी युगमें हुई। आत्मकूरिमोल्लने 'रामायण' की रचना कर, आन्ध्रसाहित्यमें अपने लिखे अमर स्थान बना लिया है। मोल्ल रामायणकी शैली प्रौढ़ है, ग्रंथमे किये गये वर्णन मनोहारी बन पड़े है। तिमम्बक नामक एक कवयित्री ने 'सुभद्राकल्याणमु' नामक द्विपद काव्यकी रचना की है।

तिरुपति वेंकटेश्वर (बालाजी) के मन्दिरमें संकीर्तन करनेवाले महाभक्त अन्नमाचार्यका उल्लेख ऊपर हो चुका है। पेद तिरुमलाचार्य, चिन्नन, चिन तिरुमलाचार्य और तिरुवेगळप्प आदि इन्हीके परिवारके सुप्रसिद्ध साहित्यकार है। तिरुवेगळप्पने 'काव्य प्रकाशिका' और 'अमरकोश' की टीकाएँ लिखी है। वेलगपूडि वेंगयामात्यने श्रीकृष्णकर्णामृत'का सुन्दर पद्यानुवाद किया है।

इस युगमें ऐतिहासिक महत्वके कुछ काव्य लिखे गए है। इनमें कासे सर्वप्प का 'काकतीय राजवंशावलि' (वरंगलके प्रतापशुद्रकी गाथा), अदुगुल वेंकय्यका 'नरपतिविजयमु' (विजयनगरके आर्वीटी राजाओंका इतिहास) और कुमार घूर्जटिका 'कृष्णराय विजयमु' (श्रीकृष्णदेवरायके जीवनसे सवधित) मुख्य है। ये काव्यग्रन्थ कल्हणकी राजतरंगिणीके आदर्शपर लिखे गये है। काव्य होनेपर भी इनमें कई ऐतिहासिक सत्य भरे पड़े है।

विजयनगरके पतनके बाद दक्षिणके बहमनी राजवंशके मुगलमान बादशाहों ने भी तेलुगु साहित्यकी श्रीवृद्धिमे प्रशंसनीय योग दिया है। कदुकूर रुद्रकविने 'निरंकुशोपाख्यानम्' 'जनादेनाष्टकम्', 'सूरीव विजयम्' की रचना की है।

तेलुगु भाषामें उपलब्ध यक्षगानोंमें 'सुग्रीव विजयमु' सर्वप्रथम है।^१ इस रुद्रकवि को गोलकुण्डाके इब्राहीम कुतुबशाहने 'चितलपालेमु' नामक गाँव देकर पुरस्कृत किया था। चरिसोंड धर्मनका 'चित्रभारतमु', हरिभट्टका 'मत्स्य पुराणमु' और 'नृसिंह पुराणमु', पौन्निकटितेलगन्नका 'ययाति चरित्रमु', अहृकिगगाधर कविका 'तपतीसंवरणोपाख्यानमु', सारंगु तम्मय्यका 'वैजयन्ती विलासमु', मल्लारेड्डी का 'षट्चक्रवर्ती चरित्रमु', 'पद्मपुराणमु' तेलंगानेमें लिखे गए प्रसिद्ध काव्य हैं। गोलकुण्डाका राजदरवार कवियोंका आश्रयस्थान रहा है। इब्राहीमको कवियोंने 'इभराम' बनाकर 'राम' से अधिक महत्त्वशाली बनाया है। 'ययाति चरित्रमु' ठेठ तेलुगुमें, तत्सम और तद्भव शब्दोंको विलकुल छोड़कर, लिखा गया पहला काव्य है।

रायलु-युगमें तेलुगु कविताका चरम-विकास देखनेको मिलता है। इस युगके अधिक कवियोंने अनुवाद करना छोड़कर, पुराणके किर्मा भागके आधारपर स्वतन्त्र मौलिक काव्योंकी रचना करनी शुरू की। अष्टादश वर्णनोंमें युक्त प्रबन्धकाव्योंमें, कवियोंकी कल्पना शक्ति एवं काव्य-प्रतिभाके ज्वलन्त उदाहरण मिलते हैं। इन रचनाओंमें शृंगार रसकी प्रधानता रही। पांडित्य-प्रदर्शन एक गुण-सा माना जाने लगा। मुसलमान राजाओंकी आन्ध्र साहित्यकी सेवा उल्लेखनीय है।

इस युगमें विजयनगर, गोलकुण्डा, मथुरा, नंद्याल, चन्द्रगिरि आदि स्थान कविताके विहार क्षेत्र बने हुए थे।

दक्षिण-आन्ध्र युग (१७००-१८७५ तक):

विजयनगर साम्राज्यके वैभवके दिनोंमें सारा दक्षिण देश आन्ध्र नायक राजाओं (विजयनगरके सामंत राजा) के शासनमें था और कई आन्ध्र सुदूर दक्षिणमें जा बसे थे। विजयनगरके पतनके बाद आन्ध्र-सरस्वतीका विहार-क्षेत्र दक्षिणके तंजाऊर, मदुरा, मैसूर आदि स्थानोंमें रहा। उन राज्योके शासकोंने स्वयं काव्य-रचना की और कई कवि-पंडितोंको आश्रय देकर, उनसे कई सुन्दर काव्योंकी रचना करवाई। यही कारण है कि इस युगको 'दक्षिणांध्रयुग' कहते हैं। भाषा-प्रयोगमें कुछ स्वच्छन्दता दिवानके कारण और शृंगार वर्णनको अश्लीलताकी सीमा तक पहुँचानेके कारण, कुछ विद्वान् इस युगको क्षीण-युग भी या ह्रास-युग कहते हैं। पर रचनाओंकी संख्या और वैविध्यके कारण इस कथनमें सत्यका अंग कम दिखाई पड़ता है।

दक्षिणमें आन्ध्र भाषाको और रचनाको प्रोत्साहित करनेवाले प्रथम शासक हैं रामनाथपुर जिलेके शिवपुरीके गोड्डळवंशके नायक। चिनरामप्पाने पच्चकप्पुरपु तिरुवेगळ कविसे द्विपद छन्दमें 'चोक्कनाथ चरित्र' की रचना करवाई। तदुपरान्त

दक्षिणम आन्ध्र साहित्यकी विभिन्न काव्य-प्रक्रियाओंकी श्रीवृद्धि हुई। गद्य रचनाएँ, पद्यकाव्य, यक्षगान, गद्य पद आदि रचना-शैलियोंकी भरमार रही।

तंजाऊरके राजा रघुनाथ भूपाल (१६१४-३३) श्रीकृष्णदेवरायके समान ही 'साहिती समरांगण सार्वभौम' थे। कहा जाता है कि इन्होंने कुल सौ ग्रन्थ रचे हैं। लेकिन अब रामायणका कुछ भाग, 'वाल्मीकि चरित्र' 'शृगार सावित्री' और 'नल चरित्र' ही उपलब्ध हैं। इनके दरबारमे 'मयुरवाणी' नामक एक कवयित्री थी, जिसने इनके रामायणका सस्कृतमे अनुवाद किया। इस युगके श्रेष्ठ कवि हैं चेमकूर वेंकट कवि। इन्होंने 'सारंगधरचरित्र', 'विजयविलासमु' नामक काव्योंकी रचना कर उन्हें रघुनाथ भूपालको समर्पित किया। इनकी कविता शब्दालंकारोंसे लदी और श्लेष-ध्वनिमय होती थी। कृष्णाध्वरिने 'रघुनाथ भूपालीयमु', 'नैपथ्य पारिजातमु' की रचना की। इनमे पहला लक्षण ग्रन्थ है तो दूसरा द्वयार्थ काव्य। काळय्य कविका 'राजगोपाल विलासमु' मन्नारगुडिके क्षत्र-माहात्म्यका वर्णन करनेवाला काव्य है। शैली प्रौढ़ एवं समास-बहुला है।

रघुनाथके पुत्र, विजयराघवने लगभग पचास पुस्तकोंकी रचना की है। लगभग बीस यक्षगान, 'रघुनाथाभ्युदयमु', 'पाउका-सहस्रमु' नामक द्विपद काव्य, कुछ दण्डक, सांगत्य, रगड़ इनकी रचनाएँ हैं। 'रघुनाथाभ्युदयमु' में अपने पिताके जीवन-चरित्रका प्रभावशाली चित्रण किया है। इनके दरबारमें रगाजम्म नामक एक सुप्रसिद्ध कवयित्री थीं। रंगाजम्मने संग्रह भारत, भागवत और रामायण, 'उपापरिणयमु', 'मन्नारुदास विलासमु' आदि यक्षगानोंकी रचना की। इसी समय, कोनेटि दीक्षित, वेंकट पति सोमयाजि मन्नारुदेव आदि कवियोंने भी यक्षगान लिखे।

कालक्रमसे तंजाऊर महाराष्ट्रके अधिकारमे चला गया। इन महाराष्ट्र शासकोंने तेलुगु भाषाके प्रति आदर ही नहीं दिखाया, प्रत्युत तेलुगुमें स्वयं कई काव्यों एवं नाटकोंकी रचना भी की है। सम्प्रति यक्षगान-साहित्यके लिए तंजाऊर रत्नाकर ही है। इस युगमें लिखे गए दो हिन्दी—यक्षगानोंका भी पता चला है।

इस युगमे पद-कविताको अमर बनानेवाले दो महाभक्तोंका भी जन्म हुआ। त्यागराजुके सैकड़ों कीर्तनों (जिन्हें 'कृतियाँ' कहते हैं) के अतिरिक्त 'प्रह्लाद विजयमु' और 'नौका विजयमु' नामक दो यक्षगान भी हैं। त्यागय्यकी रचनाएँ भक्तिकी अनन्य मयुरिमासे पूर्ण हैं। क्षेत्रय्यने मोव्वगोपालपर कई पदोंकी रचना की है। ये पद अभिनय (नाट्य) के अधिक उपयुक्त हैं। त्यागय्यकी रचनाओंमे संगीत और साहित्यकी गंगा जमुना है तो क्षेत्रय्यके पदोंमे संगीत, साहित्य और अभिनयकी त्रिवेणी।

चेञ्जि नामक प्राचीन स्थानके राजवंशसे सम्बन्धित मवरमु चिन नारायण-राजु (१६००-१६५०) ने 'कुलवयाश्व चरित्रमु' नामक-काव्यकी रचना की है।

तंजाऊरके बाद मद्रुरा और पुदुक्कोट राज्य पण्डितों और कवियोंके आश्रय-स्थान बने। मद्रुराके नायक राजाओंके समयमें कई गद्य-ग्रन्थोंका प्रणयन हुआ है जिनमें समुखमु वेकट कृष्णप्प नायकका 'जैमिनी भारतमु', कुट्टुति वेकटाचलपतिका 'भारत, भागवत वचनमुलु', तुपाकुल अनन्त भूपालका 'विष्णु पुराणमु', 'मुन्दर काण्ड' और 'भगवद्गीता' आदि उल्लेखनीय हैं। पद्य काव्योंमें कामेश्वर कवि कृत 'सत्यभामा सान्त्वनमु', 'वेकटकृष्णप्प' नायकके 'अहल्या सक्रंदनीयमु', 'राधिका सान्त्वनमु', शयमु वेकट पतिका 'तारा शशांक विजयमु', मुद्दुपुळनि (कवयित्री) का 'राधिका सान्त्वनमु' प्रसिद्ध है। ये सभी उत्कट शृंगारके काव्य हैं। इनमें 'तारा शशांक विजयमु' में तो अश्लील शृंगारकी हद कर दी गई है। ऐतिहासिक वचन (गद्य) ग्रन्थोंमें 'रायवाचकमु' प्रमुख है।

पुदुक्कोटके कवियोंमें नुदुरुपाटि वेंकनका नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। इन्होंने 'आन्ध्र भाषाणवमु' नामक शब्दकोश, तथा 'मल्लु पुराण', 'रघुनाथीयमु', 'राजवंश प्रशस्ति' आदि ग्रन्थोंकी रचना की। राय रघुनाथ नायकने (१७६९-१७८९), 'पार्वती परिणयमु' नामक प्रौढ़ काव्यकी रचना की। ये एक उद्भट पण्डित थे।

मैसूर राज्यके आन्ध्र कवियोंमें पालवेकरि कदिरीपति प्रमुख है। इन्होंने 'शुकसप्तति' नामक काव्य-ग्रन्थ की रचना की है। इस काव्यमें उस समयकी सामाजिक परिस्थितियोंका सर्जाव चित्रण मिलता है। गद्य काव्योंमें कळुवे वीरराजुका 'वचन भारतमु' प्रसिद्ध है। नञ्जराजुका 'हालास्य माहात्म्यमु' भी एक सुन्दर रचना है।

यह न समझना चाहिए कि इस युगमें केवल दक्षिणी आन्ध्र देशमें ही साहित्य-रचना होती रही; अपितु मध्य आन्ध्र और तेलंगानेमें भी उच्च कोटिके साहित्यकी सृष्टि हुई है।

१८ वीं शतीके मध्य आन्ध्रके कवियोंमें दामेल वेंगळ नायक, कविसार्वभौम कूचिमञ्चि तिममकवि, जगकवि, आडिदमु सूरकवि, कंकण्ट पापराजु, दिट्टकवि नारायण कवि प्रमुख हैं। तिममकविका 'अच्चतेनुगु रामायणमु' (ठेठ तेलुगु) और ठेठ तेलुगुमें ही लिखा गया 'नीला सुन्दरी परिणयमु' आदि प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। एनुगु लक्ष्मण कवि, एलकूचि बालसरस्वती (पुरुष हीं है!) और पुप्पगिरि तिममन्नने भतृहरिके सुभाषितोंका पद्यानुवाद किया है। इन तीनोंमेंसे लक्ष्मण कविकी रचनाका ही अधिक प्रचार हुआ। मंगळगिरि आनन्द कवि और पिण्णिल्लनार्यने 'वेदान्तसार' और 'तोभ्य चरित्रमु' नामक दो काव्य लिखे हैं जो ईसाई-धर्मसे सम्बन्धित हैं।

१९ वीं शतीके कवियोंमें शिष्टु कृष्णमूर्ति शास्त्री, मण्डपाक पार्वतीश्वर शास्त्री, गोपीनाथमु वेंकटकवि विशेष रूपसे उल्लेख्य हैं। कृष्णमूर्ति शास्त्रीने 'सर्व कामश परिणयमु', 'पञ्चतन्त्र' आदि काव्योंके अतिरिक्त संस्कृतमें 'हरिकारिकाएँ'

नामसे एक आन्ध्र व्याकरणकी रचना की है। पार्वतीश्वर शास्त्रीने लगभग अस्सी ग्रन्थ लिखे हैं, जिनमें 'राधाकृष्ण सम्वादमु' अधिक प्रसिद्ध है। वेंकट कविने 'शिशुपाल वध' और 'वाल्मीकि रामायण'का सुन्दर अनुवाद प्रस्तुत किया है।

इस युगकी कवयित्रियोंमें तरिगोण्ड वेंकमाम्ब नामक कवयित्री प्रमुख हैं। इन्होंने 'वेंकटाचल महात्म्यमु' 'ज्ञान वासिष्ठ रामायणमु' और 'राजयोगसारमु' नामक ग्रन्थ लिखे हैं।

इसी समयके तेलंगानेके कवियोंमें सुरभि माधवरायलु, परशुरामपन्तुलु लिंगमूर्ति, मरिगण्ट कवि उल्लेख योग्य हैं। माधवरायलु जटप्रोलु रियासतके शासक थे। उन्होंने 'चन्द्रिका परिणयमु' की रचना की जिसमें श्लेष, यमक आदि शब्दालंकारोंका सुन्दर निर्वाह किया गया है। लिंगमूर्तिने यौवनके दिनोंमें 'रति-मन्मथ विलासमु' नामक प्रबन्ध की रचना की। वृद्धावस्थामें आपने 'सीतारामाञ्जनेय सम्वादमु' नामसे अद्वितीय वेदान्त-ग्रन्थ की रचना की। आपके पुत्र राममूर्तिने 'शुक चरित्र' नामसे एक वेदान्त-ग्रन्थकी रचना की है।

रायलुयुगमें शृंगार रसका जो प्रवाह उमड़ा, उसने अपनी रस-धारासे सारे युगको आप्लावित कर दिया। यह प्रवृत्ति अश्लीलताकी ओर अधिक झुकी हुई थी। राजाओंमें जो निष्क्रियता और विलासिता फैल रही थी, उसीके प्रतिबिम्ब थे ये शृंगार-काव्य। काव्योंमें हृदयपक्षकी अपेक्षा बुद्धिपक्ष ही विशेष प्रबल था। अतः भाव पक्षकी अपेक्षा कलापक्ष ही अधिक निखर उठा था। परिणाम-स्वरूप सभी रचनाओंका एकमात्र लक्ष्य पाण्डित्य-प्रदर्शन ही रह गया था। यह युग 'यक्षगान-साहित्य' के लिए स्वर्ण युग है। बीसियोंकी सख्यामें यक्षगान लिखे गए। इसी समय गद्य-साहित्यका भी प्रारम्भ हुआ।

प्रान्त तो तमिल था और राजा महाराष्ट्रीय शासक थे; फिर भी इस कालमें आन्ध्र-साहित्यकी अपूर्व श्रीवृद्धि हुई।

तंजाऊर, मधुरा, गदाल, विजयनगर, वोव्विली, वेंकटगिरि आदिके अति-रिक्त, आन्ध्र देशके सभी छोटे-मोटे राज्य-रियासत कविताके क्षेत्र बन गए।

आधुनिक युग (१८७५ से १९२० तक):

सन् सत्तावनका स्वतन्त्रता-युद्ध भारतीय साहित्यमें ही नव जागरणका सन्देश लाया हो, ऐसी बात नहीं है; बल्कि इसके परिणामस्वरूप, पाश्चात्य सभ्यताकी चकाचौंधसे मुँह फेरकर भारतीय स्वदेश और स्वभाषाकी ओर ध्यान देने लगे। समग्र राष्ट्रमें उद्बुद्ध यह नवीन चेतना राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रोंमें अभिव्यक्त होने लगी। राजनैतिक क्षेत्रमें कांग्रेसके रूपमें, धार्मिक क्षेत्रमें आर्य समाजके रूपमें, सामाजिक क्षेत्रमें ब्राह्म समाजके रूपमें व्यक्त हुआ। विचारोंकी अभिव्यक्तिका साधन साहित्य ही है। अतः नव जागरणका सुष्ठु प्रभाव देशके

प्रत्येक प्रान्तके भाषा-साहित्यमें परिलक्षित होने लगा। एक ही तरहके भावोंको भिन्न-भिन्न भाषाका जामा पहनाकर व्यक्त किया जाने लगा।

आधुनिक युगकी सभी प्रवृत्तियों एवं आन्दोलनोंका सम्यक् प्रभाव तेलुगु साहित्यपर पड़ा।

तेलुगुके आधुनिक साहित्यसे परिचय प्राप्त करनेमें पहले दो ऐसे अंग्रेज महानु-भावोंके नामोंका उल्लेख होना चाहिए, जिनका आन्ध्र चिर-ऋणी है। सर सी. पी. ब्राउन महाशयने अथक परिश्रम कर तेलुगुकी अनेक अप्रकाशित एवं जीर्ण प्राय पुस्तकोंका पुनरुद्धार किया; तेलुगुका एक व्याकरण बनाया और अंग्रेजी-तेलुगु, तेलुगु-अंग्रेजीके शब्दकोश तैयार किए। दूसरे महानुभाव हैं कर्नल कालिन मेकञ्जी, जिन्होंने गाँव-गाँव घूमकर प्राचीन पुस्तकोंका उद्धार किया, लुप्त इतिहासपर प्रकाश डाला और कवियोंकी लुप्त रचनाओंको प्रकाशमें लानेका महान कार्य किया।

आधुनिक युगके प्रारम्भमें ही चित्रयसूरि (१८०९-१८६२) नामक एक बड़े विद्वान्ने 'बाल-व्याकरणम्' की रचना की जो इस भाषाका परिनिष्ठित (स्टैण्डर्ड) व्याकरण माना जाता है। उस व्याकरणके लक्ष्यके रूपमें 'नीति चन्द्रिका' (पञ्चतन्त्र) नामक पुस्तकको गद्यमें लिखा।

१९ वीं शतीके चतुर्थ चरणका आरम्भ ही आधुनिक युगका उपकाल है। पाश्चात्य प्रभावसे नव चेतनाकी जो लहर उमड़ पड़ी, उसके परिणामस्वरूप साहित्यमें विभिन्न शैलियों और रीतियोंका प्रारम्भ हुआ। गद्य साहित्यके लिए वीरेशालगम और पद्य साहित्यके लिए तिरुपति-वेंकट कविने युग पुरुष के रूपमें नवीन साहित्यका श्रीगणेश किया। तेलुगु कवितकों पाण्डित्यके कठघरेसे मुक्त कर, उसे जनसामान्य तक पहुँचाकर, फिरसे उसे नव जीवन देनेवाले इन महाकवियोंके शिष्य-प्रशिष्योंसे आधुनिक आन्ध्र साहित्य भरा पड़ा है।

आन्ध्र साहित्यमें प्राचीन सम्प्रदायोंके अनुकूल भाषा और भावोंमें कविता करनेवाले आज भी हैं। १९ वीं शतीके अन्तिम चरणमें और २० वीं शतीके प्रथम दशकमें इन प्राचीन सम्प्रदायवादी कवियोंकी संख्या अधिक थी। इनमें श्री श्रीपाद कृष्णमूर्ति शास्त्री (१८६६-१९६१) का विशिष्ट स्थान है। शास्त्रीजीने 'रामायण' 'भारत' और 'भागवत' इन महाकाव्योंके अतिरिक्त सौ से अधिक काव्योंकी रचना की है। आप राजमहेन्द्रीमें रहते थे। आपकी कविता, विषय और शैलीमें एकदम प्राचीन ढरें की हैं। दीर्घ समासोंसे भरी हुई होनेपर भी आपकी कविताओंमें अनुपम प्रवाह है। श्री वेंकटशास्त्रीजीके बाद आपकी राजकविके पदपर नियुक्त कर आन्ध्र सरकारने आपका सम्मान किया था।

प्राचीन सम्प्रदायवादी कवियोंमें श्री वाविलकोलनु सुब्बाराव, जनमञ्चि शेषाद्रि शर्मा, कोक्कोण्डा वेंकटरत्नम् पन्तुलु, वड्डादि सुब्बारायडु, वेदम् वेंकटराय शास्त्री, मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री, दामु श्रीरामलु आदि मुख्य हैं। 'आन्ध्र वाल्मीकि'

के नामसे प्रसिद्ध बाविलकोलनु सुब्बारावने 'वाल्मीकि-रामायण' का यथामूल अनुवाद किया, उनके जीवन कालमें ही इस अनुवादके चार संस्करण प्रकाशित हो गए थे। उसकी व्याख्याके रूपमें उन्होंने स्वयं 'मन्थरमु' नामक टीका भी लिखी है।

प्राचीन सम्प्रदायको न छोड़ते हुए नवीन भावोंसे युक्त कविता करनेवालोंमें श्री वेंकट-पार्वतीश्वर कवि-युग्म प्रमुख है। इनकी 'एकान्त सेवा' एक तरहसे 'मर्मकविता' (रहस्यवादी कविता) का बीज बोनेवाली है।

वीरेशलिंगम पन्तुलुजीने भी शुरू-शुरूमें प्राचीन सम्प्रदायवादी रचनाएँ की थीं, पर समाज-मुधारके लिए पद्यकी अपेक्षा गद्यको अधिक उपयुक्त मानकर बादमें गद्यमें ही रचनाएँ करने लग गए। 'शुद्धान्ध-निरोप्य-निर्वचन-नैषधमु' नामक काव्यमें आपने अपने पाण्डित्यका प्रदर्शन किया है। इस ग्रन्थको आपने ठठ तेलुगुमें, विना ओप्य वणोंके और वचन (गद्य) में लिखा। उसके बाद 'नारद-सरस्वती सम्वादमु', में आपने निर्जोव-सी तेलुगु कविताकी दुर्दशाका हृदय विदारक चित्रण किया।

बीसवी शतीके पहले दशकमें यद्यपि प्राचीन काव्यधाराका जोर रहा; फिर भी नवीन कविता धीरे-धीरे अपनी जड़ें जमाने लगी थी। गुरजाडा अप्पारावजीने 'मृत्याल सरमुलु' नामक गद्य कविताओंके एक संग्रहका प्रकाशन कर नव कविताका श्रीगणेश किया। 'क्रोत्तपातल मेलु कलयिक, क्रोम्मेरुंगुलु जिम्म' (प्राचीन और नवीनके सुन्दर सम्मेलनसे, नव आलोकको फैलाते) कविता करनेकी प्रतिज्ञा, नूतन वस्तु, नए छन्द और व्यावहारिक भाषाका प्रयोग करते हुए, सर्व मानव-समत्व, देशभक्ति आदि भावोंसे भरी कविताएँ लिखीं। 'देशमण्टे मट्टि कादायि, देशमण्टे मनुषुलुयि' (देशका अर्थ मिट्टी नहीं है, देशसे मतलब जनतासे है।), 'मञ्च अन्नदि माल अयिते, नेनुगूड मालनवुतानोयि' [यदि अच्छाई 'माला' (हरिजन; पञ्चम) है, तो मैं भी वही बनूँगा।] आदि पंक्तियोंका सूक्तियोंके रूपोंमें उपयोग होता है।

श्री रायप्रोळु सुब्बारावने प्राचीन गौरवका गान करते हुए, राष्ट्रीयताके भावोंका प्रचार किया था। आपपर विश्वकवि गुरुदेवका प्रभाव पड़ा था।

वेदशाखलु वेलसे निच्चट
आदिकाव्यं बलरे निच्चट।

[वेदोंकी शाखाएँ फैल पड़ीं यहाँ, आदि काव्य रचा गया यहाँपर।]

१९१३ में ही इन्होंने 'ललिता', 'तृणककणमु' नामक खण्ड काव्योंकी रचना कर, भाव कविता (छायावादी कविता) के बीज बोए।

२० वीं शतीके दूसरे शतकमें स्वतन्त्रताका आन्दोलन जोर पकड़ने लगा। सत्याग्रह-समरका सर्वप्रथम प्रारम्भ गुण्टूर जिलेमें हुआ था। 'साइमन कमीशन' को पहली बार काला झण्डा दिखानेवाला वीर एक आन्ध्र ही था। उस वीरका नाम था श्री टंगुटूरि प्रकाशम पन्तुलु जो बादमें आन्ध्र-केसरी कहलाया। समग्र देशकी

स्वतन्त्रताकी पुकारके साथ, प्रत्येक प्रान्तकी माँग भी आन्ध्रकी थी। इन दोनों भावोंने मिलकर देशके और विशेषकर आन्ध्रकी प्राचीन गौरव गाथाएँ, वर्तमान दुर्दशा आदि पर प्रभाव शाली कविताएँ करनेकी प्रेरणा दी। श्री गरिमेल्ल सत्यनारायण कविने ब्रिटिश सरकारकी निरंकुशताका वड़ा ही मार्मिक वर्णन करते हुए लिखा है:—

नूट नलुबदिनालु नोटिकि तर्गिलंचि
माट लाडवहंटाडु; मम्म
पाट पाड वहंटाडु; टोपी
तीसि वीपुन बादुताडु ।

[(ब्रिटिश सरकारका) वह सिपाही हमारे मुँहपर १४४ धारा लगाकर हमें बोलनेसे मना करता है। हमें अपना (राष्ट्रीय) गीत तक गाने नहीं देता। (सिरपरसे) टोपी नीचे फेककर पीठपर प्रहार करता है।]

‘हपी क्षेत्रमु’ नामक कवितामें कोड़ालि सुव्वाराव प्राचीन आन्ध्रके गौरवका स्मरण कर और वर्तमानकी दुर्दशाको देखकर कराह उठते हैं:—

शिलु ड्रुविचि एड्वनवि,
जीर्णमुलैनवि तुंगभद्रलोपल गुडिगोपुरमुलु,
सभास्थलुलैनवि कौंडमुच्चु गुंपुलुकु
चरित्रलो मुनिगिपोयिनादान्ध्र वसुन्धराधिपोऽज्वल विजय
प्रताप रभसंबोक स्वप्न कथावशेषमे ।

[शिलाएँ भी पिघल कर रो पड़ीं। मन्दिर और महल तुंगभद्रामें डूबकर खण्डहरोंमें परिवर्तित हो गए। वे बन्दरोंके सभास्थल बने हुए हैं। आन्ध्र राजाओंके उज्ज्वल प्रतापकी कहानी स्वप्न-कथा मात्र बनकर, इतिहासमें लुप्त प्राय हो गई है।)

विश्वनाथ सत्यनारायणने प्राचीन आन्ध्र वैभवका गान करते हुए ‘आन्ध्र-प्रशस्ति’, ‘आन्ध्र-पौष्ट’ आदि कविताएँ लिखी हैं।

ब्रिटिश शासनकी क्रूरता और प्रचण्डताको देखकर कुछ सुकुमार विहंगम अपने नीड़ोंमें छिपे-छिपे कुछ गुनगुनाने लगे। प्रथम महायुद्धके बाद सारे देशमें निराशा-सी फैल गई थी। जिस प्रकारकी परिस्थितियोंमें हिन्दी क्षेत्रमें छायावादका जन्म हुआ, तेलुगुमें उसके (छायावादके) समकक्ष ‘भाव-कविता’ पनप उठी और १९२० के बाद तेलुगु कवितामें लाक्षणिक प्रयोग, आत्माभिव्यक्ति, भाषाकी वक्रता, अस्पष्टता, एवं प्रकृति-प्रेम आदिकी धूम मच गई। रीति और नियमोंके स्थानपर अब भाव और लयका आग्रह बढ़ने लगा।

नाटक :

यक्षगान देशी रूपक है। ऐसा माना जाता है कि इन देशी रूपकोंको छोड़ संस्कृत रूपकके लक्षणानुसार श्री कोराड रामचन्द्र शास्त्रीने ‘मञ्जरी मधुकरियमु’

नामक पहला नाटक लिखा। उनके बाद कई प्रसिद्ध पण्डितोंने और कवियोंने संस्कृत, अंग्रेजी और अन्य भाषाओंके नाटकोंके मुन्दर अनुवाद प्रस्तुत किए हैं। केवल 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' ही के लगभग बीस अनुवाद प्रकाशित हुए हैं।

आन्ध्र नाटक साहित्यकी विशेषता यह रही है कि यहाँके नाटक प्रारम्भसे ही 'रंगस्थल' को ध्यानमें रखकर लिखे जाते थे। १८८० में धारवाड़ (महाराष्ट्र)से जो नाटक कम्पनियाँ आईं, उनके प्रभावसे कई नाटक मण्डलियाँ खुली और अभिनयके लिए कई मुन्दर नाटक लिख गए। बल्लारिमें धर्मवरमु रामकृष्णमाचार्य (१८८४) ने कई मौलिक नाटक लिखे और 'मरम विनोदिनी' समाके तत्वावधानमें य नाटक अभिनीत हुए। चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहजीने 'गयोपाख्यानम्', 'पारिजातापहरणम्' आदि पौराणिक नाटक लिखे। तिरुपति-वेंकट कवियोंके 'पाण्डव उद्योग विजय' नाटक बहुत प्रसिद्ध हैं।

१९ वी शतीमें लिखे गए नाटकोंमें 'विपाद-सारंगधर' (प्रथम दुखान्त नाटक) गुरजाडा अप्पारावका 'कन्या शुकुम्' (प्रथम सामाजिक-व्यग्यात्मक नाटक जो व्यावहारिक भाषामें लिखा गया है।) और वेदमु वेंकटराय शास्त्रीजीका 'प्रताप स्त्रीयम्' (पात्रोचित भाषाका प्रयोग करनेवाला प्रथम नाटक) विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं।

२० वी शतीके प्रारम्भमें इसी प्रकारके पौराणिक इतिवृत्तपर आधारित नाटक ही अधिक लिखे गए। द्वितीय दशकमें सामाजिक नाटकोंकी रचना होने लगी।

अन्य साहित्यिक प्रक्रियाओंके समान ही वीरेशलिगमजीने प्रहसनोंके रूपमें एकांकीका प्रारम्भ किया है। उस समय कोक्कोण्ड वेंकटरत्नम पन्तुलुने 'नरकामुर-विजय-व्यायोग' का अनुवाद कर संस्कृतके एकांकीके स्वरूपका दिग्दर्शन कराया।

वीरेशलिगम पन्तुलुजीका 'राज शेखर चरित्र' जो उस समयके समाजका दर्पण है, तेलुगुका पहला उपन्यास माना जाता है। यह 'विकार आफ वेकफील्ड' का छायानुसरण मात्र है। गुलीवरकी कहानियोंके समान उन्होंने 'सत्य राजा पूर्व देश यात्राएँ' नामक पुस्तक भी रची है।

कोक्कोण्ड वेंकटरत्नम पन्तुलुने कादम्बरीका आधार लेकर सन् १८६४ में 'महाश्वेता' नामक उपन्यास लिखा।

स्वयं लिखनेकी अपेक्षा प्रतियोगिताएँ चलाकर वीरेशलिगमजीने कई उपन्यास लिखवाए। इनमें चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहजीके 'रामचन्द्र विजयम्', 'हेमलता', 'कर्पूरमञ्जरी', 'अहल्यावाई', 'मौन्दर्यतिलका' मुख्य हैं। केतवरपु वेंकटशास्त्री और भोगराजु नारायण मूर्तिने कई ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं। अडवि वापिराजुके 'दिम्बिन्दु', 'गोन नन्नारेड्डी' आन्ध्रोंके इतिहासमें सम्बन्धित हैं। विश्वनाथ सत्यनारायणजीने भी कई उपन्यास लिखे हैं। इनमें सबसे छोटा उपन्यास 'एक वीरा' है। यह उपन्यास रचना-कौशलमें अद्वितीय है। आपका सबसे बड़ा उपन्यास 'वेयिपडग्लु (सहस्र फन) तो भारतीय संस्कृतिका मानों विश्वकोप ही है

सन् १८५० से ही संस्कृतकी कई कथाओंके अनुवाद और छायानुवाद होने शुरू हो गए थे। चित्रयस्मृति, वीरेशलिगम पन्तुलु, वेंकटरत्नम पन्तुलु, वेंकटराय शास्त्रीने शिष्ट भाषामे कई कहानियाँ लिखी हैं, पर इन्हें आधुनिक कहानीकी परिभाषाकी कसौटीपर नहीं कसा जा सकता।

२० वी शतीके प्रारम्भमे कई पत्र-पत्रिकाओंमें संस्कृतके अतिरिक्त अंग्रेजी एवं अरबी कहानियोंके अनुवाद प्रकाशित होते थे।

श्री गुरुजाडा अप्पारावने सन् १९११मे आजकी कहानी रचनाका श्रीगणेश किया। 'दिदुवाटु' (भूल-सुधार), 'देवुड चेमिन मनुपुल्लारा' (भगवानके बनाए हुए हे मानवों!) आदि कहानियाँ तेलुगुकी प्रारम्भिक कहानियाँ हैं। १९१५ मे दैनिक 'आन्ध्र-पत्रिका' के शुरू होते ही अधिक संख्यामे कहानियाँ लिखी जाने लगी।

चिन्ता भीमशकरमूर्जीकी जासूसी कहानियाँ, कोडवटिगण्टि वेंकट सुब्बय्य की सामाजिक कहानियाँ, चिन्ता दीक्षितुलुकी वालोपयोगी कथाएँ इसी युगकी हैं। मुनिमाणिक्यमनरसिहाराव गृहस्थ जीवनमे निहित हास्यको अभिव्यक्त करते हुए रचना करने लग गए।

१९२०मे 'साहिती' के प्रकाशनसे कहानी रचनाको और भी प्रोत्साहन मिला।

आलोचनात्मक साहित्यके जन्मदाता भी वीरेशलिगम् ही हैं। 'आन्ध्र कवुल चरित्र' उनकी विशिष्ट कृति है। २० वी शतीके प्रथम दशकमे सर सी. आर. रेड्डीका 'कवित्व तत्व विचारमु' आधुनिक (पाश्चात्य विचार-धारासे प्रभावित) आलोचनाका प्रवर्तक ग्रन्थ है। इस समय तेलुगुमें आलोचनात्मक पुस्तके लिखी तो गई, पर उनकी संख्या अधिक नहीं है।

लेखकोंकी संख्या, रचनाओंकी संख्या और साहित्यके विभिन्न प्रकारोंके विस्तारकी दृष्टिसे भारतीय साहित्यके क्षेत्रमे तेलुगु साहित्यका एक विशिष्ट स्थान है। कहा भी है कि आन्ध्रके प्रत्येक घरमे, कम-से-कम एक कवि-है। इस विस्तृत साहित्यका अिन थोड़ेसे पृष्ठोंमे परिचय मात्र करानेका यह अल्प प्रयास है।

[नोट—सन् १९२० से आजतकके तेलुगु साहित्यका संक्षिप्त परिचय 'कवि-श्री माला तेलुगु—काटूरि वेंकटेश्वर और पिगलि लक्ष्मीकान्तम्मे दिया गया है।]

तिरुपति-वेंकट कवुलु

[कवि-परिचय]

तिरुपति-वेंकट कवुलु



“ दोसमटं चेरिगियुनु बुदुडुकोप्पग बेचिनार मी
मोसमु रेंडु बासलकु मेमे कवींद्रुलमंचु देल्पगा
रोसमु कल्लिगनं गविवरुल् ममु गेल्बुडु-गेल्लिचरेनि यी
मोसमु तोसि मी पदसमीपमुलं दललुंचि ओक्कमे । ”

[यह जानकर भी कि मूँछ रखना दोष है, अक्वड़ताके साथ मूँछ यह वतानेके लिए बढ़ा रखी है कि दोनों भाषाओंमें—आन्ध्र और संस्कृतमें—हम ही कवीन्द्र है। जिन्हें इन मूँछोंको देखकर रोष आता हो, वे हमें जीत लें। यदि जीतें तो इन मूँछोंको निकालकर, आपके चरणोंपर सिर न रख दें ?]

इस प्रकारकी अपूर्व प्रतिज्ञा कर, एक अर्द्धशती तक आन्ध्र-कविता-साम्राज्य पर निर्द्वन्द्व शासन चलानेवाले कवियुगमें कवि श्री तिरुपति और श्री वेंकट। उनके शिष्यों-प्रशिष्यों एवं एकलव्य शिष्योंसे भरा पड़ा है आधुनिक-आन्ध्र-काव्य जगत्।

इस कवियुगमें पहले व्यक्ति श्री दिवाकलं तिरुपति शास्त्री हैं, दूसरे हैं श्री चेळ्ळपिळ्ळ वेंकट शास्त्री। तिरुपति शास्त्रीजीका जन्म कृष्णा जिलेके 'एण्डगण्डि' नामक ग्राममें सन् १८७१ में हुआ और मृत्यु सन् १९१९ में हुई। माताका नाम शेषम्मा और पिताका नाम वेकटावधानी था। वेकट शास्त्रीजीका जन्म 'एनाम' (भारतमें फ्रांसीसी उपनिवेश) में हुआ पर निवासस्थान पश्चिम गोदावरी जिलेका 'कड़ियम' नामक ग्राम था। इनका जन्म सन् १८७० में हुआ और मृत्यु सन् १९५० में। श्री वेंकटशास्त्री-

की माताका नाम चन्द्रम्मा और पिताका नाम कामय्य था। तिरुपति शास्त्री शिष्टाचार-सम्पन्न पण्डित परिवारके थे। उनके पिता, दादा-परदादा वेदोंके प्रसिद्ध पण्डित थे। वेंकटशास्त्रीजी का परिवार कविताका आकर था। उनके परदादा नरसकविने 'यामिनीपूर्णतिलक विलासमु' और 'वेंकटेश्वर विलासमु' नामक प्रबन्ध-काव्योंकी रचना की थी। इन दोनोंने प्रकाण्ड विद्वान् श्री चर्ल ब्रह्मय्य शास्त्रीजीके यहाँ व्याकरण शास्त्रका अध्ययन किया। संयोगसे सहाध्यायी बने और दोनों महानुभावोंका जीवन पर्यन्त अटूट सग बना रहा। ब्रह्मय्य शास्त्रीजीके पास आनेसे पहले वेंकटशास्त्रीजीने थोड़ी-बहुत अँग्रेजी, तेलुगु भाषा और साहित्यका अध्ययन किया। उसी समय वे थोड़ा-सा गाना-बजाना, कुश्ती लड़ना तथा कविता करना भी सीख गए थे। श्री श्रीपाद-कृष्णमूर्ति शास्त्री* के पास आपने तीन भह्नीने तक 'कुमार सम्भव' के दो सर्ग पढ़े। एनामके भगवान वेंकटेश्वर पर आपने एक शतक लिखना शुरू किया। उसमें प्रयुक्त कुछ व्याकरण विशयोंका जवाब न दे सकनेके कारण पाणिनीय व्याकरण पढ़नेके लिए आप काशीको चल पड़े। मार्गमें राघवाचार्य, अनन्ताचार्य, और सूरय्यके पास थोड़े-थोड़े समय तक पढ़ते रहे। आँखकी बीमारीके कारण कुछ समय तक आपकी पढ़ाई बन्द रही। अन्तमें आप ब्रह्मय्य शास्त्रीजीके पास आए। उस समय तिरुपति शास्त्री ब्रह्मय्यजीके पास अध्ययन कर रहे थे। वेंकटशास्त्रीजीमें हठ और श्रद्धा अधिक थी जब कि तिरुपति शास्त्रीजी कई विषयोंकी देखी-अनदेखी कर देते थे। इन दोनोंका मेल सोनेमें सुगन्ध-सा सिद्ध हुआ। वेंकटशास्त्रीके सम्पर्कसे ही तिरुपति शास्त्रीजीको कविता करनेका अभ्यास हो गया था। इसलिए वे एक स्थानपर कहते हैं:—

विताताःमोय शतावधान कविता विद्यापयोराशिसं
भूत शिष्यांबुद वाङ्मयामृतरस प्रीताखिलान्ध क्षमा
धृत रज्यद्रसिकावतंसकृत वदि स्तोत्रमालाविभू
वितु मा वेंकटशास्त्री ने बोगडेदन् शिष्यस्वरूपम्मुनन् ।

[अपने महान शतावधान कविता रूपी विद्याके लिए समुद्र समान, सम्यक् रूपसे सम्पन्न शिष्य भेषोंके वाङ्मयके अमृत रससे सन्तुप्त बने समग्र आन्ध्रके प्रसन्न बने रसिक श्रष्टों द्वारा किए गए स्तोत्ररूपी मालाओंसे विभूषित वेंकट शास्त्रीकी मैं, शिष्य स्वरूपमें स्तुति कहूँगा।]

विद्याध्ययनके समयसे ही दोनों मिलकर कविता करनेका अभ्यास किया। 'माता-पिताके एक न होनेपर भी दोनों विद्याके कारण ही भाई-भाई बने और समस्त रचनाएँ मिलकर ही करने लग गए।' 'ओक्करु रचियिचिरेनियुनु गादगु

* आन्ध्रके दूसरे राजकवि हैं, जिनकी मृत्यु '६१ में हुई। इन्होंने सौ से अधिक पुस्तकें लिखी हैं।

दिर्पति वेंकटीयमै' (कोई एक भी लिखे तो वह रचना 'तिरुपति-वेंकटीय' मानी जाएगी।) इस वचनको उन्होंने जीवन पर्यन्त निभाया। तिरुपति शास्त्रीके स्वर्गवासके बाद लगभग तीस वर्ष तक वेंकट शास्त्री निरन्तर लिखते रहे, पर वे सारी रचनाएँ दोनोंके नामपर हैं। ऐसे उदाहरण संसारके इतिहासमें बिरले ही मिलते हैं।

अध्ययनके समाप्त होनेपर कुछ समय तक इस कवियुग्ममें समग्र आन्ध्र देशको अपने अवधान-कविताके प्रवाहसे परिप्लावित कर दिया। कविताको पण्डितोंकी चहार-दीवारीसे बाहर लाकर उसे जन-सामान्य तक पहुँचाया। अवधान कलाका प्रदर्शन करते हुए वेंकटगिरि, गद्दाल, आत्मकूरु, वनपति, विजयनगर, किल्लपूडि, नूजिवीडु, बोव्विलि आदि आन्ध्र देशके प्रसिद्ध 'संस्थानों' (रियासतों) में जाकर, वहाँके शासकोको अपनी प्रतिभा-व्युत्पत्तिसे प्रभावित कर, उनसे पुरस्कार प्राप्त किए। तदुपरान्त मछलीपट्टमके नागरिकोंके निमन्त्रणपर, वेंकटशास्त्री वहाँके हिन्दू हाइस्कूलमें लगभग तेरह वर्ष तक तेलुगुके अध्यापकके रूपमें कार्य करते रहे। उस समय यह नगर आन्ध्रके राजनैतिक, सामाजिक और साहित्यिक जागरणका केन्द्र बना हुआ था। इस हाइस्कूलमें काम करते हुए, भाषाकी शिक्षाकी अपेक्षा, उन्होंने कविताकी शिक्षा खूब दी। उनकी प्रेरणासे उत्साह प्राप्त कर, कविके रूपमें प्रसिद्धि प्राप्त करनेवालोंमें विश्वनाथ सत्यनारायण, वेदूरि प्रभाकर शास्त्री, वेलूरि शिवराम शास्त्री, काटूरि वेंकटेश्वरराव, पिगलि लक्ष्मीकान्तम आदि प्रमुख हैं। तिरुपति शास्त्रीजी पोलवरमुके जमींदार श्री कोच्चेलकोट वेंकट कृष्णाराव बह्मादुरजीके दरबारके विद्वान बन हुए थे। वेंकट कृष्णारावजी प्राच्य एवं पाश्चात्य भाषाओंके विद्वान् थे। इस प्रकारका आदर-सत्कार वे थोड़े ही दिनों तक पा सके थे कि काल पुरुष उन्हें उठा ले गया। दिवाकरके अस्तंगत होनेपर वेंकट शास्त्री इस प्रकार विलख उठे:—

नाकन्न धीबलम्मुन
नेकादु तन्बलमुन नंतयु हेच्चौ
लोकस्तुत्युडु तिर्पति
नाकन्नन् मुझे येद्लु नाकमु मुट्टेन् ।

[मेधाबलमें ही नहीं शारीरिक बलमें भी मुझसे कहीं शक्तिशाली है।
लोकसे प्रशंसित तिरुपति शास्त्री, मुझसे पहले ही कैसे स्वर्गको पहुँच गए !]

सन् १९१९ के बादसे सन् १९५० तक वेंकट शास्त्रीजीकी कलमसे लिखी गई सभी रचनाएँ दोनोंके नामपर ही प्रकाशित हैं।

सन् १९३३ में मछलीपट्टममें महान् वैभवके साथ श्री वेंकट शास्त्रीजीका षष्ठिपूर्ति-महोत्सव मनाया गया। उसके बाद श्री शास्त्रीजी कृष्णा नदीके किनारे विजयवाड़ामें बस गए और अन्त तक वहीं रहे।

देशके स्वतन्त्र होनेपर हमारी सरकारने भारतकी प्रत्येक भाषाके लिए एक राजकविकी नियुक्ति की। आन्ध्र देशमें सर्वप्रथम उस गौरवको पानेवाले श्री वेंकटशास्त्री ही थे। उन्हें पुरस्कृत करनेके लिए आन्ध्र और मद्रास सरकारने (तबतक अलगसे आन्ध्र प्रान्त नहीं बना था।) विजयवाड़ामें उपस्थित हो उस महाकवि एवं शतावधानीका सत्कार कर अपनेको धन्य माना।

सन् १९५० की फरवरीकी १५ तारीखको शिवरात्रिके पर्वपर वेंकट शास्त्रीजी कैलासवासी हो गए।

रायलु युगमें नन्दि मल्लय और घण्ट सिगय नामक दो कवियोंने मिलकर कविता की थी, पर पता नहीं, उन्होंने अवधान-विद्याका प्रदर्शन किया या नहीं। कहा जाता है कि वसुचरित्रके कर्ता रामराजभूषण 'शतलेखिनी ग्रन्थ सन्धान चान्तुरी' युक्त थे। आधुनिक कालमें माडभूपि वेंकटाचार्य, देवुलपल्लिवन्धु, वेंकट रामकृष्ण कवि (अन्तिम दो कवियुग्म हैं) आदिने भी 'अवधान' किए थे। पर तिरुपति वेंकटकुलुके समान इस विद्याको विख्यात करनेवाले नहीं थे। 'जगदाश्रय-करावधान कविता सम्पत्ति' से सम्पन्न कवियुग्म तिरुपति-वेंकट कवि ही थे। प्रारम्भमें ये 'तिरुपति वेंकटेश्वर' (वालाजी) ही के नामसे प्रसिद्ध हुए थे।

'अष्टावधान' और 'शतावधान' की प्रक्रियाओंका यहाँ थोड़ा परिचय दे देना असंगत नहीं होगा। 'शतावधान' का अर्थ है सौ लोगोंको, उनकी इच्छापर, (विषय और वृत्त) संस्कृतमें और तेलुगुमें, क्रमसे सौ आशु पद्योंके प्रथम चरण मात्र सुनाना। सौ पद्योंको सुनानेके बाद उसी संख्यामेंसे या श्रोताओंकी इच्छाके अनुकूल फिर उन्हीं पद्योंके पूरे चार चरण सुनाना पड़ता है। 'अष्टावधान' में चार-पाँच लोगोंको आशु कविता सुनाना—किसीको किसी विषयपर पद्य, समस्यापूर्ति, निषेधाक्षरी, व्यस्ताक्षरी, दत्ताक्षरी आदि प्रकारके पद्य, शास्त्र-चर्चा या आकाश पुराण, घण्टियोंको गिनना, शतरञ्ज आदि आठ कामोंमें चित्तको एक ही समयमें, एकाग्र करना। अन्तमें फिरसे सभी पद्य सुनाना। इस प्रकारके इन दो विद्याओंमें, इस कवियुग्मने अपूर्व प्रतिभा दिखा, प्रतिपक्षियोंसे भी प्रशंसा पाई। तिरुपति शास्त्रीका अप्रतिम पाण्डित्य और वेंकट शास्त्रीकी असाधारण मेधांने मिलकर, इस कठिन कार्यको सुगम बना दिया। दिनभर, दिमागको हल्का कर देनेवाले शतावधान अष्टावधानमें लगे रहकर, रातमें देर तक विनोद कार्यक्रमोंमें भाग लेकर, मजेकी नीद सोकर, फिर दूसरे दिन सबेरे, कुछ खाए बिना ही अवधानके शेष भागकी पूर्ति करनेके लिए तैयार रहनेवाले इस कवियुग्मको देख, लोग चकित रह जाते थे। दोनोंके हृदय और मस्तिष्क एक-से काम करते थे। प्रौढ़ पण्डितों और प्रभुओंकी सभाओंमें ही नहीं, बाल-पामर-गोष्ठियोंमें भी अपनी कविता-चान्तुरीसे प्रशंसाएँ पाते थे। एक बार उन्होंने स्वयं कहा है :—

शतघंटकवनम्मु सत्पु संगतिघ्न
 गरतलामलकाम्मु गादेमाकु,
 अष्टावधानकष्टावलंबनमन्न
 'नंबिकोंडय दंडनंबु' माकु,
 आशुधारा कवित्वाडंबरं बन्न
 'नल्लेरु पै बंडिनडक' माकु,
 सत्काव्य निर्माण चाकचवयंबन्न
 षड्सोपेत भोजनमु माकु,
 व्यर्थमगु वादमुलोनर्चुनट्टि वारि
 डंब मर्णांगुचुटापोशनंबु माकु
 दानराधेय ! कविसमुदायगेय !
 पंडितविधेय ! रामभूपालराय !

[सौ लेखिनियोंको साथ-साथ कविता कहना, यह कार्य हमारे लिए हस्ता मलक (सुलभ साध्य) है। अष्टावधान रूपी कठिन कार्य हमारे लिए 'नबिकोण्डयके दण्ड' के समान अत्यल्प है। आशुधारासे कविता कहना (लोग इसे आडम्बर मानते हैं) हमारे लिए हूडजोड़ापर गाड़ीके चलनेके समान है। सत्काव्य निर्माण (रचना) का कार्य हमारे लिए, षड्सोपेत भोजनके समान है। व्यर्थ ही वाद विवाद करनेवालोंके गर्वका दमन करना हमारे लिए आपोशनके समान है। है दानराधेया ! कविसमुदायगेया ! पण्डितविधेया ! हे रामभूपाल राय ! (यह है हमारी सामर्थ्य।]

ओक चरणंबतंडु मरियोक्कटि नेनु मरोक्कटाटडुन्
 सकल कवींद्रसंततुलु सम्मति चे दललूचि मेच्चगा
 प्रकटराशुधार दनरन् रर्चियिपगनेर्तुमय्य ! ' नू
 टिकि सेलगय्य ! निक्कमिदि डेब्बदिमाटलु सेप्पनेटिकिन् ?

[एक चरण वह और एक चरण मैं, इस प्रकार सकल कवीन्द्रोंकी प्रशंसाओंके पात्र होते हुए, प्रसिद्ध आशुधारासे कविता कर सकते हैं। सौ पद्यों तक कोई संकोच नहीं है, कहते जाएँगे, हे राजन् ! यह तो सच है। हजार बातें क्यों कहें !]

गुरुकुलसे निकलने ही उन्होंने पहली बार 'काकिनाडा' नामक नगरमें श्री डुरिसेट्टि शेषगिरि रावजीके यहाँ अष्टावधान किया। तब इनकी आयु केवल २० वर्षकी थी। श्री शेषगिरि रावजी इन युवकोंकी अनन्य प्रतिभा और मेधासे चकित हो गए थे। तब इनकी सामर्थ्यकी और अधिक परीक्षा करनेके लिए श्री वादमु वेंकटरत्नमने शतावधान करनेके लिए कहा। ये युवक मान गए। दूसरे दिन सभाका आयोजन किया गया। उस दिन शामको दोनों मिलकर गाँवके बाहर नारियल के

वनमें गए और वहाँ नारियलके वृक्षोंको ही प्रश्नकर्ता मानकर उन्होंने वहाँ ' शतावधान ' किया। इस शतावधानके बाद उन्हें यह आत्मविश्वास हो गया कि शतावधान तो क्या अब सहस्रावधान भी किया जा सकता है।

दूसरे दिन बहुत बड़ी सभा हुई। प्रश्न करनेवाले सौ पण्डित सामने बैठे हुए थे और उनके पीछे सैकड़ोंकी संख्यामें जनता बैठी हुई थी। सौ विषयोंपर दो-दो चरण कहते-कहते शाम हो गई। अब शेष दो चरणोंकी पूर्ति कैसे हो ? कलपर यदि छोड़ दें तो ये कवि रातभरमें सोच लेंगे और कल कह देंगे, अतः अवकाश नहीं देना चाहिए। तब सभी पण्डितोंने एक निर्णय किया कि सौ पद्योंको कह मुनानेकी आवश्यकता नहीं है, क्रम छोड़कर किन्ही दस पण्डितोंको उनके पद्य सुनाएँ तो ठीक रहेगा। उसके लिए भी ये युवक तैयार हो गए और दस, सोलह, बत्तीस, तीन, सौ, छप्पन इस तरह बिना किसी क्रमके ही पद्योंको इन्होंने सहज ही में सुना दिया। इसे देखकर सभी लोग दंग रह गए और देशके चारों कोनोंमें तिरुपति वेकट-कवियोंकी अनुपम प्रतिभाकी बात फैल गई। अब वहाँसे आन्ध्र प्रदेशके सभी बड़े नगरोंमें, सभी संस्थानोंमें इन कवियोंने अष्टावधान और शतावधान किए। जहाँ भी गए विजयश्री इन्हीके पल्ले पड़ती थी। तिरुपति शास्त्री अपने पाण्डित्य और प्रतिभासे विरोधियोंको निरुत्तर कर देते तो वेकट शास्त्री उदण्डता और समयापूर्तिसे विरोधियोंको मुँह-तोड़ जवाब देते। राजाओं और जमीदारोंने स्वागत-सत्कार किया है, वरन् चार गालियाँ देकर ये लोग वहाँसे चल देते।

एनुगु नेक्कनारु धरणीद्रलु ओक्कगनिक्कनारु स
न्मानमुलंदिनारु बहुमानमुलंग्रंहिचिनारु ले
श्वानिनि लेक्कपेट्टक निवारणदिग्विजयंबोनचि प्र
ज्ञानिधुलंचु बेरुगोनिनारलु मीरु कवित्वसंपदल् ।

[कविता-सम्पत्तिके कारण आप (तिरुपति-वेकट कवि द्वय) हाथीपर चढ़े धरणीपतियोंके पैर पड़नेपर अकड़े, अनेक सम्मान पाए, अनेक पुरस्कार प्राप्त किए, किसीकी परवाह न कर, निर्द्वन्द्व हो दिग्विजय कर आपने ' प्रजानिधि ' का नाम पाया।]

इनकी धारणाशक्तिसे अत्यधिक प्रभावित होकर श्रीमती एनी बीसेन्टने इस प्रकार लिखा है।

' I have much pleasure in stating that I was present at the remarkable exhibition given by D. Tirupati Shastry and Ch. Venkatasastri, of the powers of memory they possess. It entirely excelled anything I should have thought possible. Judging by ordinary

standards and in addition to feats of memory the Shastries showed great powers of improvising Verse in difficult metres and nimble wit in repartee.

(28th Dec, 1893. Adayard, Madras)

आन्ध्र विश्वविद्यालयने वेंकट शास्त्रीजीको 'कलाप्रपूर्ण' की उपाधि प्रदानकर सम्मानित किया।

इस प्रकार [अट्टु गट्टात्तिट्टु चेत्रपट्टणमु मध्यन् गत्तु देशम्बु] (उधर गट्टालसे लेकर इधर मद्रासके बीचके समग्र देशमें)] घूमकर, उड़ीसाके सीमावर्ती विजयनगर तक जाकर, कविताभिषेचनके अभावमें ऊसर बने आन्ध्र-साहित्य-क्षेत्रको, कविताकी अमृत-वर्षा-धाराओंसे पुलकित बना दिया, हरा भरा बना दिया। अंग्रेजीके प्रभावसे और पण्डितोंकी पाण्डित्यगरिमासे गूंगी-सी बनी आन्ध्र-कविता-कन्याको इन कवी-श्वरोंने मुखर बना दिया।

इन अष्टावधान-शतावधानोंके अनेक प्रसंगोंपर होनेवाले वाद-विवादोंने इनकी कीर्तिको और भी फैलाया। ये अष्टावधान व शतावधान तिरुपति-वेंकट कवियोंकी प्रतिभा-व्युत्पत्तिके ज्वलन्त उदाहरण हैं। किसीने ठीक ही कहा है कि तिरुपति-वेंकट कवियोंके काव्योंकी अपेक्षा उनसे सम्बद्ध गाथाएँ उनके मुक्तक, उनकी वीरोक्तियाँ और चमत्कारपूर्ण सम्भाषणके नमूने ही देशमें रह जायेंगी।

“ तिरुपति-वेंकट कवियोंकी कविता प्राचीन कविताके लिए भरत वाक्य है तो नवीन कविताका नादी-पाठ है। ” उनकी रचनाओंमें प्राचीन कविताकी पाण्डित्य-गरिमाके साथ, नवीन कविताका प्रसाद-गुणयुक्तता और सरलता दृष्टिगोचर होती है। 'पाण्डित्यकी अटवी' (वन) से कविताका उद्धार कर, उसे जन सामान्य तक पहुँचानेवाले तिरुपति वेंकटेश्वर ही हैं।

तिरुपति कवियोंने काव्यके अतिरिक्त नाटक, गद्य, आलोचना और कथाएँ भी लिखी हैं।

'बुद्ध चरित्रम्', 'लक्षणा परिणयम्', 'एलामाहात्म्यम्', 'श्रीनिवाम विलासम्', 'देवी भागवतम्', 'पतिव्रता', 'सुशीला', 'पूर्वहरिश्चन्द्रम्' 'शिवलीलाएँ', 'श्रवणानन्दम्' 'पाणिगृहीता', 'नानाराज सन्दर्शनम्' (मुक्तक संग्रह) 'जातक चर्या' आदि काव्य ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। 'कामेश्वरी शतक' सुन्दर भक्ति शतक है।

'पाण्डव जननम्', 'पाण्डवोद्यगम्', 'पाण्डव-अश्वमेधम्', 'पाण्डव-राजसूयम्', 'पाण्डव विजयम्', 'पाण्डव-प्रवासम्', महाभारतके इतिवृत्तसे सम्बन्धित इन छह नाटकोंके अतिरिक्त 'मुद्राराक्षस', 'मृच्छकटिक', 'प्रभावती प्रद्युम्न' का सुन्दर अनुवाद किया है। 'बाल रामायणम्' भी एक सुन्दर अनुवाद है। 'एडवर्ड पट्टाभिषेकम्',

‘व्यसन विजयमु’, ‘दम्भवामनमु’, ‘अनर्धराघवमु’, ‘पण्डितराजमु’ इन कवियोंके अन्य नाटक हैं।

गद्य ग्रन्थोंमें ‘विक्रमांक देव चरित्रमु’, ‘चन्द्र प्रभा चरित्रमु’, ‘हर्ष चरित्रमु’ मुख्य हैं। व्यावहारिक (बोलचालकी) भाषा * में लिखे गए अनेक संस्मरण ‘कथलु-गाथलु’ के नामसे प्रकाशित किए जा रहे हैं, जिनके अवतक पाँच भाग प्रकाशमें आए हैं।

‘गीतरतमु’, ‘गुण्टूरसीम’, ‘शृंखला तृणीकरणमु’, ‘पश्यांपुश्यां’, ‘शनिग्रह’ आदि प्रतिपाक्षियोंका खण्डन करते हुए लिखे गए ग्रन्थ हैं। शतावधानोंमें—उक्त समयमें कहे गए पद्योंको—भी कुछ का पुस्तक रूपमें प्रकाशन हुआ है।

‘पल्लेटूळ पट्टदललु (ग्रामीणोंके हठ) नामसे ग्रामोंमें प्रचलित रूढ़ियों और अन्ध विश्वासोंका खण्डन करते हुए, व्यंग्य प्रधान प्रहसन लिखा है।

इन तेलुगु रचनाओंके अतिरिक्त ‘तिरुपति-वेंकट कवियोंने संस्कृतमें ‘धातु-रत्नाकर’ नामक राम कथा-चम्पू काव्य, ‘शृंगार शृंगाटक’ नामक छोट-सा वीथी-रूपक, ‘काली सहस्र’ नामक काव्य और कई अष्टक एवं स्तोत्र लिखे हैं।

श्री वेंकट शास्त्रीजीकी पण्टिपूति महोत्सवके उपलक्ष्यमें श्री काटूरि-वेंकटेश्वर-रावजीके सम्पादनमें ‘तिरुपति-वेंकट कवियों’ की लगभग सभी रचनाएँ आठ भागोंमें प्रकाशित हुई थी।

महात्मा बुद्धके जीवनपर आधारित अंग्रेजी काव्य है ‘Light of Asia’। उसपर आधारित ‘बुद्ध चरित्रमु’ की रचना हुई जिसमें ६०० ही पद्य थे। परन्तु बादमें अश्वघोषके ‘बुद्ध चरित्र’ और क्षेमेन्द्रकृत ‘बुद्धजन्म’ में से कुछ श्लोकोंका अनुवादकर १००२ पद्योंका ‘बुद्ध चरित्र’ नामक काव्य प्रकाशित हुआ। इस काव्यमें महात्माके जन्म, तपस्या और धर्म प्रचारका सरस वर्णन किया गया है। इस काव्यका निम्न पद्य सुप्रसिद्ध है:—

जननम्मुन् भरणम्मु जन्तुवुलकुन् स्वाभाविक, म्मेरि के
ल्लिनजंबौने, सुखंबुलेक्कडिवि तल्ली! ऐटिकेडादियै
ननु गालेदु प्रयोजकुन्, सुजनमन्दारम्मु, चेट्तं वा
निनि पुत्रुन् दिर्गान्निगि रायिकरणिन् जीर्विचि यिट्लुंडने ?

महाराज बृहत्सेनकी पुत्री लक्षणाका श्रीकृष्णके साथ विवाहका वर्णन करनेवाला काव्य है ‘लक्षणा परिणयमु’। इसमें नारद प्रसंग और कीरका सन्देश

* व्याकरण-युक्त भाषाको ‘ग्रान्थिक (ग्रन्थोंमें उपयुक्त) भाषा’ और व्याकरण नियम रहित बोलचालकी भाषाको ‘व्यावहारिक भाषा’ कहते हैं। आधुनिक कालमें आकर, ‘व्यावहारिक भाषा’ की ओर झुकाव अधिक हो गया है।

मनोहर बन पड़े है। 'एलामाहात्म्य' में एला नदीकी उत्पत्तिकारण स्वरूप एला नामक महामुनि और किन्मीर नामक राक्षसकी तपस्याका वर्णन है। 'श्रीनिवास-विलासम्' संस्कृतके उसी नामके चम्पू काव्यका अनुवाद है जिसमें भगवान विष्णुके श्रीनिवास रूपमें अवतरित हो; पद्मावती और अलिवेलु मगाके साथ विवाह कर सात पर्वतोंपर, 'वालाजी' बन रह जानेकी कथा है। 'देवी भागवतम्' संस्कृतके 'देवी भागवत' का अनुवाद है पर अनुवादके समय कवियोंने 'आन्ध्र महाभारत' की शैलीको आदर्श मान रचना की है। 'पतिव्रता' और 'सुशीला' में दो पतिव्रता नारियोंकी कथाएँ हैं। 'श्रवणानन्दम्' और 'पाणिगृहीता' में परोक्ष रूपसे वेश्यागमनकी निन्दा करते हुए, दो विलासी पुरुषोंके जीवन-चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। शृंगार रस प्रधान होने हुए भी नीति बोधकी रचनाएँ हैं। 'श्रवणानन्दम्' का यह पद्य जनताकी जवानपर है:—

धनरा पोवुनु, मानमा चेडुनु, निन्दा नेत्ति पै केक्कु लो
ननुमानितुह तल्लितंङ्गु लु, कुलंबा वप्नेकुं दग्गु, नु
तन मांयंबु घटिल्लु, बन्दुगुलु पन्तंबोप्प निन्दितुरो
मनमा ! बोद्धिक नाडुमाट विनुमा, मरियाद गापाडुमा !

[धन तो चला जाएगा। मान तो विगड़ जाएगा। मिरपर निन्दा नाच उठेगी। माता-पिता भी मनमें सन्देह करते रहेंगे। कुल-भर्यादा घट जाएगी। नया आलस्य पैदा हो जाता है। जान-बूझकर सम्बन्धीजन निन्दा करते हैं। रे मन ! मेरी बात सुनो, अब छोड़ दो इसे (वेश्यागमनको)। मेरी लाज बचाओ।]

'नानाराजसन्दर्शनम्' और 'कलगूरगम्प' (विविधा) में समय-समयपर और राजसभाओंमें भेजे गए और कहे गए पद्योंका संग्रह है। ये पद्य कवियोंकी प्रतिभा और समस्यापूर्तिके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

आत्मकथा लिखनेकी प्रथाका प्रारम्भ पाश्चात्य प्रभावसे हुआ है। वीरेश-लिंगमजीने गद्यमें अपनी आत्मकथा लिखकर इसका प्रारम्भ किया तो उनसे पहले ही वेंकट शास्त्रीजीने 'जातक चर्या' नामसे अपनी जीवनीका काव्यके रूपमें निबद्ध किया है। वे प्राचीनता और नवीनताके सन्धिगूत्र हैं। अतः स्वयं अपनी कथा न कहकर, ज्योतिषके अनुरूप अपने जीवनकी घटनाओंका वर्णन करते गए। जन्मके समय, ग्रह-सम्पत्तिकी व्याख्याके रूपमें यह काव्य रचा गया है। 'एवरो ब्रासिन रीति स्वविषयमनु जातकपुमिपन् ब्रामेनु दा, कवियगुट वेंकटेशुडु' [स्वयं कवि होनेसे वेंकटेश (वेंकटशास्त्री) ने अपने ही विषयको 'जातक' के समान, ऐसा लिखा, मानों कोई दूसरा लिख रहा हो।] यह काव्य फलित ज्योतिषका अद्वितीय ग्रन्थ है और वेंकटशास्त्रीजीके ज्योतिष-शास्त्रके पाण्डित्यका अनुपम उदाहरण है।

‘कामेश्वरी शतकम्’ में समय-समयपर देवीके प्रति कहे गए पद्योंका संकलन है। इसमें कविकी अनन्य भक्ति और अचञ्चल आत्मविश्वासके दर्शन होते हैं।

कवलेलन् जयपेट्टु वैभवमोसंगन् लेदो तच्छिष्यवर्गं
विभूतिन् गर्हाणपवो तनुजनुभग्यिंबु गंसेयवो
विविधेश्वर्यम् लिचिर्चितक नोकटे विश्वेशि ! नी सन्निधन्
गविगा नुड ननुग्रहिपुमिदिये काम्यंबु कामेश्वरी !

[कवियोंके जय ! जय ! करने योग्य वैभव दिया है। शिष्य समूहसे मुझे अनुगृहीत किया है। सन्तान भी दे रखी है। विविध ऐश्वर्य भी दिए हैं। हे माता ! कामेश्वरी ! अब मेरी इच्छा एक ही है। वह है तुम्हारे सान्निध्यमे कवि बना रहूँ। कृपा कर दो न माते !]

तिरुपति-वेंकट कवियोंकी रचनाओंमें ‘गीरतम्’ एक विशिष्ट काव्य है। यह एक सुन्दर व्यंग्य (Satire) एवं मुक्तक रचना है। वेकट शास्त्रीजीके किसी शिष्यके उन्हें गुरु न मानते हुए, उनकी निन्दा करनेपर यह काव्य रचा गया है। “असत्य प्रलापोसे श्री शास्त्रीजीके अत्यन्त क्रुद्ध होनेपर, उस आवेशके कारण, अनायास ही उमड़ी हुई यह ‘गीरत’ की कविता धारा, तिरुपति-वेंकट-कवियोंकी रचनाओंमें विलक्षण बन, आन्ध्र भारतीको अपूर्व रूपसे अलंकृत कर रही है।”
(श्री काटूरि-वेंकटेश्वरराव)

ग्रन्थके नामकी परिभाषा देते हुए कवि कहते हैं:—

गीर्षुयेतु रतास्ते वै गीरताः परिकीर्तिताः

तानुद्दिश्यकृतम् काव्यंगीरतम् परिचक्षते ॥

[गिराओमें जिनकी आसक्ति है, उन्हें ‘गीरत’ कहते हैं। उन सज्जनोको लक्ष्यमें रखकर लिखा गया काव्य ‘गीरत’ कहलाता है।]

‘गीरतम्’ में ‘अधिक प्रसंगदमन’, ‘गुरु दक्षिणा’, ‘विग्रहाराधना’, ‘लोकाभिरामायणम्’ नामक चार भाग हैं। ‘महाभारत’ के अनुरूप पर्व-विभाग किया गया है। पर्वोंका नामकरण निराला है। यथा ‘मेकुबिगिम्पु पर्वम्’ (कीले कसनेका पर्व), ‘चप्पटल पर्वम्’ (ताली बजानेका पर्व आदि ।)

‘गीरतम्’ के समान ही ‘गुण्टूरसीमा’ भी व्यंग्यात्मक रचना है। गीर-तम्में ‘रामकृष्ण कवियुग्म’^x पर व्यंग्य किया गया है तो ‘गुण्टूरसीमा’ में कोप्परपु कवियुग्म* पर। इन काव्योंकी भाषा-शैली सरल और सरस हो बोलचालकी भाषाके समान ही है। कहीं-कहीं पाण्डित्य-प्रदर्शनके लिए प्रौढ़ शैलीमें लिखनेपर भी सहज

x ओलेटि वेंकटराम शास्त्री और वेदुल रामकृष्ण शास्त्री नामक दो कवि ।

* कोप्परपु सुब्बाराव और पार्वतीशम ।

सरलता इनकी कविताका विशिष्ट लक्षण है। 'लोकुल नालुकलने आकुलुग जेसी' [जनताकी जीभको ही (वोलीको ही) रचनाका माध्यम बनाकर] लिखनेवाले इन कवियोंकी शैली सहज और सरल न होगी तो कैसी होगी ?

'कवियै पुट्टिनवाडुवेंकन' [यह वेकन्न (वेकटशास्त्री) कवि होकर पैदा हुआ है।]* कहनेवाले इन कवियोंमें आत्मविश्वास और स्वाभिमानकी मात्रा कूट कूटकर भरी हुई थी। वे समझते थे कि हमारा जन्म ही कविताके लिए हुआ है :—

कवनार्थ मुदयित्तिन्
मुकविता कार्यबे ना वृत्ति
मद्भव मद्दान दर्ति,
तद्भवमद्भाग्यंबु।

[कविताके लिए ही मेरा जन्म हुआ है और मुकविता करना ही मेरा पेशा है। इसीसे इस संसारसे तर जाऊँगा, और उस लोककी बात ? वह तो मेरे अदृष्टकी बात है।]

इसी कारणसे किमी राजाकी सभामें रहना या किसी की नौकरी करना, उन्हें विलकुल पसन्द नहीं था :—

कवुलमिप्पटि रूत्स (rules) कु कट्ट वडमु
घनुलु पंडितरायादि कवुलु चूपु
त्रोवलंबट्टिपोदुमु, देवुनैन
लक्षपेट्टुमु, माकु वल्लभुलु लेरु।

[हम कवि हैं। आजकलके नियमोंसे न बँधकर, पण्डितराय आदिके मार्गपर विचरण करते हैं। भगवानकी भी परवाह नहीं करते। हमारा कोई स्वामी नहीं है।]

देवी पूजा-निरत वेकटशास्त्रीजीने कहा :—

नरनाथुल्ल पलुमंदि मित्रुलयियुन्नं गानि तत्सन्निधिन्
स्थिरवासम्मोर्नरिचु पुनिकलु नाचे गावु, नी वटि स
त्करुणाशालिनि पेंपगा बेरिगि, विद्याबुद्धुल्लन्नेचि, ने
बरुल्लन्नित्यमु गोल्लुटोप्पगुन्ने अंबा ! देवि ! कामेश्वरी !

[कई राजा मेरे मित्र हैं, पर उनके यहाँ सदाके लिए रह जानेके प्रयत्न मुझसे नहीं होनेके। हे माता कामेश्वरी ! तुम जैसी करुणामयीके हाथों पलकर, बड़े होकर, विद्या-बुद्धि सीखकर, सदा दूसरोंकी सेवा करते रहना कहाँ तक ठीक है ?]

अजन्त भाषा होनेके कारण तेलुगु भाषामें सहज-माधुर्य है। इसीसे मुग्ध होकर किसी विदेशी यात्रीने इस भाषाको 'Italian of the East' कहा है। तेलुगु पद्य तो राग-लय संयुक्त हो, सुस्वरमें गाया जा सकता है। आन्ध्र देशमें पद्य पठनकी एक विशिष्ट शैलीका प्रारम्भ किया तिरुपति-वेंकट कवियोंने। अवधानके समय जनताको मुग्ध रखनेका यह एक अच्छा साधन है। आजकल कभी पण्डित इसी शैलीका अनुकरण करते हैं। साठ सालके होनेपर भी वेंकट शास्त्रीका न तो स्वर-माधुर्य ही कम पड़ा और न कलम ही धीमी हुई। पण्डितपूति महोत्सवके समयमें कविवर करुणा श्री (जंघ्याल पाय्यशास्त्रीजी) के पद्यमें यह भाव बड़ी सुन्दरताके साथ व्यक्त किया गया है।

तलमीदि वेंडुक्कल् पलुचबडुवि गानि
 पलकु कम्मदनंबु पलुचबडु,
 नडललो दडबाटु पोडसूपुने गानि
 नुडुललो दडबाटु नुडुवराडु,
 शारीर पटिमंबु जारु चुन्नदि गानि,
 धारणापटिमंबु जारलेडु,
 ओडलिपै मुडुतलु पोडमुच्चुन्नवि गानि
 कवितलो मुडुतल गान बडवु,
 परग नोक्कोक्क येडु पै बडुकोलदि
 नीवु वृद्धगुचुंडगा नीडु कवित
 यंतकंतकु वयसुपिल्लगुचुनुंडे
 जित्रमिदियौर ! सुकविताचित्रकार !

[सिरके बाल पतले पड़ गए पर बोलीकी मिठास तो पतली नहीं पड़ी। चालमें लड़खड़ाहट आ गई पर, बोलमें तो लड़खड़ानेका नाम तक नहीं। शारीरिक सामर्थ्य कम हो रही है पर धारणा शक्ति ढीली नहीं पड़ी है। शरीरपर झुरियाँ पड़ रही है पर कवितामें कहीं दोष नहीं दीख रहे हैं। एक-एक साल बढ़ते जानेपर, तुम्हारे वृद्ध बनते समय, तुम्हारी कविता तो दिन-दिन युवती बनती जा रही है। हे सुकविताके चितेरे ! यह कैसा विचित्र है ?]

आधुनिक सभ्यता और अँग्रेजी शिक्षासे वेंकट शास्त्रीको अत्यधिक घृणा थी। आधुनिकतापर उन्होंने कई चुभते व्यंग्य किए हैं :—

‘सकलम्मुन् गोरिगिचुकोंदुरकटा ! सन्यासुला ? कारु;’

[सब कुछ मुँडवा लेते हैं, पर संन्यासी तो नहीं हैं।]

‘बोट्टोकीयंतैनियु फालमंदिडरदेमो ! मुडला ? कारु;’

[ललाट भागपर थोड़ा-सा भी तिलक धारण नहीं करते, पर विद्यवा तो नहीं है।]

तेलुगु देश एव तेलुगु भाषाके प्रति अनन्य अनुराग प्रकट करते हुए वेंकट शास्त्रीजी देवीसे इस प्रकार विनती करते हैं :—

जननाभावमनुग्रहिषु, मदि नो शक्यमुकादेति पै
जननम्मंडुनु ना कोसंगुमेटुलो संगीतसाहित्यमुल्
पनिलेदीयुदरंपु बोषणकुनै भाषांतरम्मल्

[हे माता ! जन्म साहित्यसे अनुगृहीत करो। वह तुमसे नहीं हो सके, तो अगले जन्ममें भी किसी तरह संगीत और साहित्य—ये दो विद्याएँ दे दो। पेट भरने मात्रके लिए दूसरी भाषाएँ नहीं चाहिए।]

सन् १९३३ के माघ मासके अपने सम्पादकीयमें 'भारती' (प्रसिद्ध तेलुगु साहित्यिक पत्र) ने इस प्रकार अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित की थी।

“१९ वीं शतीके अन्तिम चरणमें जीर्णप्राय वने आन्ध्र-कविता-साम्राज्यका उद्धार कर, देशभरमें अपनी विजय-पताकाओको लहरानेवाले पण्डित और कवि सम्राट हैं शतावधानी श्री तिरुपति-वेंकट कवि। इनकी सरस-रचना चानुर्यमें कविता-लतांगी नवीन अलकारोंसे विभूषित, नूतन-उत्साहसे सम्भरित हो, नूतन शैलियोंमें सहृदयोंकी हृदय-रंगस्थलियोंपर लास्य करने लगी। आन्ध्र देशके कई व्यक्ति इन महान् विभूतियोंकी सेवा-शुश्रूषा कर, उनके अनुग्रहसे कवि और पण्डित हो, प्रसिद्ध वने हैं। आज इस देशमें श्री शतावधानियोंके शिष्यों एवं प्रशिष्योंकी संख्या बहुत अधिक है। इस प्रकार आन्ध्रवर्णियोंको पुष्ट बना, आन्ध्रोंको साहित्य और कविता-श्री से सम्पन्न करनेवाले युगपुरुष श्री तिरुपति-वेंकट कवियोंके पवित्र नाम आन्ध्रोंके लिए निरन्तर मनन और स्मरणके योग्य है।”

आन्ध्र जनताने उन्हें 'वाल-कलानिधि', 'विद्वत्कवि', 'वाल-सरस्वति', 'किंकवीन्द्रघटा-पञ्चानन' [छोटे-कु कवियोंके गजसमूहके लिए सिंह समान] आदि उपाधियाँ देकर अपनेको धन्य बनाया है। आन्ध्र विश्वविद्यालयने 'कलाप्रपूर्ण' की उपाधिसे सम्मानित किया है।

दोनों कवियोंकी जोड़ी ऐसी अनुपम थी कि देखनेवालोंको आश्चर्य होता था कि ये दोनों एक हैं? या इनमेंसे कौन प्रतिभावान है? इस विचित्र सम्मेलनकी व्याख्या करते हुए वेंकट शास्त्रीजी कहते हैं :—

तिरुपति चेतवच्चेनो यतिप्रतिभामहिमंबु वेंकट
श्वरुनकु; वेंकटश्वरुनि वल्लने चेंदेनो या महत्वमुल्
तिरुपति; तद्विवेकमु निर्लिपुलु सैतमेरुंगतिकुं
तिरुपति वेंकटश्वरुल तेकुव काकवुलंदनेर्तुरे

[तिरुपतिसे आया हो वेंकटेशको यह अति प्रतिभाकी महिमा या वेंकटेश्वरसे ही तिरुपति महिमान्वित हुआ हो। पर यह रहस्य तो देवता भी नहीं जानते। तिरुपति-वेंकट कवियोंका यह साहस कुकवियोंको, कविमात्रोंको कहाँसे लभ्य होगा !]

एसा था उनका परस्परका सौहार्द्र !

अपने अवधानों एवं रचनाओं द्वारा एक अर्द्धशती तक समग्र आन्ध्र देशको प्रभावित किया है इस कवियुग्मने। प्राचीनता और नवीनताके सन्धि-स्थलपर खड़े हो इन कवियोंने कविताको लोकप्रिय बनाया है।

उधर अँग्रेजियतकी बाढ़ और उधर 'पण्डितोंके प्रीट्-भाषाके पक्षपात' के बीचमे पड़, पिंसनेवाले तेलुगु साहित्यको नय जीवन दे, नव उत्साहमे भरनेवाले ये कवि मानो कार्लिदाम और भवभूति ही हो।

इस प्रकार नव्य कवितावतरणके भगीरथ बन, आन्ध्र साहित्यको एक अपूर्व दीप्तिसे प्रकाशमान बनानेवाले 'तिरुपति-वेंकट कवि' तेलुगु साहित्यमे अजर-अमर कीर्तिके पात्र है।

‘जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।’



तिरुपति-वेंकट कवुलु

[काव्य-सञ्चय]

१. बुद्ध चरित्रम् (सर्षपोपाख्यानम्)

राजगृहाभिधाननगरम्बु गरम्बु स्वधर्मपद्धति
 देजमु तप्पकुंड नवनीपतियै तगु बिम्बिसारु डें
 ते जनमु ल्नुतिप ललि नेलुचुनुंडे गुलीनुलैन रा
 राजुल माडिक मन्त्रुलु तिरम्मुग सुस्थिति देल्पुचुंडगन् ॥१॥

रत्नगिरि कंदरम्मन राजपुत्रु
 डोकडु राज्यम्मु विडिचि भिक्षुकुनि पगिदि
 नणगि युन्ना, डतडु महानुभावु
 डनियेडु वदन्ति राजगृहमुन ब्रबले ॥२॥

अनद योकर्तु तन्नगरमन्दु वसिच्चुनुंडु, दानिकि
 दनुजु डोकडु, वाडुपवनंबुन गृम्मरुवाडु चिल्विका
 टुनकु गतामुडे चनिनटु ल्चेलिकांड्रु रयंब येगि य
 व्वनितकु देल्पि; रापे पेनुवन्त मरल्चगलेक येतयुन् ॥३॥

कोडुकु पामु कतन गूल नच्चोटु जेर
 व्रोयि नोरु नेत्ति मोडुकोनुचु
 'नन्नु विडिचिपोते ना कुलाधारंब
 ना तनूज' यनि मनमनु बोगिलि ॥४॥

वेडियु दुरन्त चिन्ताभरंबापलेक यप्पापनिसंबंबुपै बडि यिट्लु
 विल्पिंचे ॥५॥

कटकट येन्नडेनि नोक कष्ट मेरुगक नीत्रु नाकु ग
 ल्गुटकु ननेकदैवमुल गोलिच जगम्मुलु मेच्चगंति नी
 चिटिपोटि मेन गाड गरचे बेनभतम वोले नेत य

१. बुद्ध-चरित्र (राई की कहानी)

स्वधर्म पद्धतिके अनुरूप तेजस्वी विम्बसार, जनताकी प्रशंसाओंका पात्र हो, राजगृह नामक नगरपर कुलीन राजाओंकी भाँति, मन्त्रिगणसे राज्यकी सुस्थितिका परिचय पाते हुए शासन कर रहा था ॥१॥

उस राजगृहमें एक अफवाह उड़ी कि रत्नगिरिकी गुफाओंमें एक राजकुमार अपने राज्यको छोड़ भिक्षुकी तरह रहता है, जो बड़ा ही महिमायुक्त है ॥२॥

एक अनाथ स्त्री उस नगरमें रहती थी, उसका एक पुत्र था। उपवनमें घूमते समय उसे साँपने डस लिया और वह मर गया। उसके मित्रोंने तुरन्त माताको इसकी खबर दी। वह इस महा दुःखके मारे—॥३॥

रोती-पीटती वहाँ गई जहाँ साँपके डसनेसे विगतप्राण होकर बच्चा पड़ा था। हे मेरे कुलाधार! हे मेरे तनय! हाय! मुझे अकेली छोड़कर चल वसे! ऐसा कहकर वह बिलखने लगी ॥४॥

फिर दुरन्त चिन्ता भारको सह न सकनेके कारण उस बच्चेके शवपर गिरकर वह इस प्रकार विलाप करने लगी ॥५॥

हाय, विना किसी कष्टके सुखसे रहनेवाली मैंने पुत्रकी इच्छासे अनेक देवताओंकी पूजा कर लोककी प्रशंसा पाते हुए तुम्हें जन्म दिया। हाय पुत्र! यह कहाँका कालसर्प महाभूतके सम आ धमका जिसने निर्दय हो तुम्हारे नन्हें शरीरको डस लिया ॥६॥

तोडि बालुरतो गूडि नेडु पेमि
 गेळिमै नुन्नवेळ निन्नेल करचे
 नट्टनडि पूलतोड फणाधरंबु ?
 पामु गाददि नातोलिबामु गानि ॥७॥

कोडुकु कळेबरमु पर्यि
 बडि यिट्टु लेल्लोत्ति येड्चु पडति गनगा
 दडबाटुन जनुदेंचिरि
 वडिवडि ना यिरुगुपोरुगु वाडजनंबुल् ॥८॥

गोणगोण नेदियो गोणुगुचु गेलु सा
 रिचि मारजनल मंत्रिचुवारु,
 विषमु वो मन्दुलु विषवस्तुवुले यंचु
 नूरि कल्केमु गंटगूरुवारु,
 वनपत्रमुलु देन्चि पसरु गिन्नेलदीसि
 मुकुजेवुल नोकिंत पोयुवारु,
 पुरवैद्यशालकु नरिगि भेषजनीर
 मुलु देन्चि गळमुन नोलुकुवारु,
 नेचटि प्राणमु ! लेचिपोयिन दटंचु
 नोरुलकोरुलकु बेदवुल विरिचिकोनुचु
 द्रुटद्रुट स्रविचु कन्नोरु दुडिचिकोनुचु
 नरुगुवारुनु नैरि तत्परजनंबु ॥९॥

इट्लनेकु लनेक प्रकारम्मलु विषनिवर्तनोपायम्मु लालोचिचि
 योनर्चुचु मृतपुत्रयगु नायम्म नोदार्चु चुन्नंत मरि कोंदरु ॥१०॥

ई नगरसमीपार
 प्यानि न्नत्तगिरिकंदरांतरमुन न
 न्यूनानुभावु डोक्क य
 तीनुंडुन्नाडतंडतींद्रियुडेंदुन् ॥११॥

साथी बालकोंके साथ प्रेमके साथ फुलवारीमें खेलते समय, तुम्हें डसनेवाला वह साँप नहीं है, बल्कि वह तो मेरे पूर्वजन्मका पाप ही है ॥७॥

पुत्रके शवपर गिरकर जोर-जोरसे रोनेवाली उस स्त्रीको, देखनेके लिए, पड़ोसके लोग घबड़ाते हुए दौड़े आए ॥८॥

गुनगुनाते हुए, हाथ फैलाकर मार्जनमन्त्र पढ़नेवाले, 'विषकी दवा विष ही है' कह, दवा घिसकर, आँखोंमें लगानेवाले, कुछ जंगली पत्ते लाकर रस निकालकर नाक-कानमें डालनेवाले, नगरकी वैद्यशाला जा, दवाईका पानी ला, गलेमें डालनेवाले, 'अरे, कहाँके प्राण? वे तो कभीके उड़ गए।' कह आपसमें निराशा सूचक बातें करनेवाले, उस नगरके जन, टपकते आँसू पोछते हुए चले गए ॥९॥

इस प्रकार कुछ लोग कई प्रकारसे विष-निवर्तनके उपाय करते हुए मृतपुत्रवाली उस स्त्रीको सान्त्वना दे रहे थे तो कुछ लोगोंने कहा :—॥१०॥

इस नगरके समीपस्थ अरण्यमें, रत्नगिरिकी कंदराओंमें महानुभाव और अतीन्द्रिय यतीश्वर रहते हैं ॥११॥

आयनयोद्दकु नीमृत
 कायमु गोनिपोम्मतंडु करुणाभरणं
 डायु वोसंग समर्थुडु
 पायंबिदि यनुचु देलुप नापेयु गडकन् ॥१२॥

बुजमु पयि न्मृत पुत्रकळेबरमुं दग बर्वुन मोयुचु मे
 न्गजगजलाडग गझुल बाष्पपु गाल्वलु भोरुन गारग न
 क्कज मेद निंचु विकारमुनं गोडुका ! कोडुका ! कोडुका !
 यनुचुं
 गुजमुलु नीडलकुं जनुचुं जने गूरिनवन्त दिगुल्वडुचुन् ॥१३॥

कुसुम पेशलमैन पसिपापमूपुपै
 जलजल गन्नीरु जार्चु दानि,
 'निट नन्नु विडिच्चि नीवेगिते हा पुत्र
 हा पुत्र' यंचु बिट्टुडलु दानि,
 'ना पापफलमु फणाघरमै निन्नु
 गरचेरा कोडुक !' यंचोरलु दानि,
 'नपकारमेमि ने नार्चरचिति माल
 देवुनि ?' कनि सारे दिट्टुदानि,
 'ना सुतुनि ब्रतिकिंचु पुण्य प्रचार
 जेप्पगदरम्म वेगमो चेट्टुलार !'
 यनुचु ना यी नगंबुल नडुगुदानि
 गनिये सिद्धार्थुडैतयु गरुणमोलय ॥१४॥

कनि 'नी वेव्वते, वेकत
 मुन दनयुंडीलो, गहनमुनकु जनुदें
 चिन कारणमे, मनि' या
 ङिन नामेयु बेल्लुग दुरटिल्लुचु बलिकेन् ॥१५॥

उनके पास इस मृत देहको ले जाओ। वे दयालु महात्मा आयु देनेमें समर्थ हैं। पुत्रको जीवित करनेका यही उपाय है। तब वह उस प्रयत्नमें, ॥१२॥

कन्धेपर मृत पुत्रके शवको रख, उस भार-वहनसे शरीरके कांपनेपर, आँखोंसे आँसुओंकी धाराओंके बहते, हृदयको आश्चर्य और विकारसे भर देनेवाले स्वरमें 'हे पुत्र! पुत्र!' कहते, वृक्षोंकी छायाओंमेंसे होते हुए, दुःखभारसे दिलके टूटते-टूटते, वहाँ गई ॥१३॥

फूल-से उस नन्हें बच्चेको कंधेपर रख, आँसू बहानेवाली, 'हाय, मुझे यहाँ छोड़ कहाँ चले हो पुत्र!' कह बिलखनेवाली, 'मेरे पापका फल ही सर्प बनकर तुम्हें डस गया रे मेरे लाल!' कह रोनेवाली, 'उस निगोड़े भगवानका मैंने क्या बिगाड़ा?' कह बारम्बार भगवानको कोसनेवाली, और 'हे वृक्षो! मेरे पुत्रको बचानेवाले पुण्य-प्रचारका पता शीघ्र बता दो न!' पूछनेवालीको, सिद्धार्थने बड़े करुण भावसे देखा ॥१४॥

देखकर पूछा—“तुम कौन हो? किस कारणसे तुम्हारा पुत्र मरा? इस जंगलमें आनेका कारण क्या है?” वह और भी अधिक रोती हुई बोली ॥१५॥

पसिवानि बामु वनमुन
 गसिमसगे झाकु वीडोकंड सुतुंडी
 निसुवुं ब्रित्किंपगल त
 पसि कलडिगिरि नटंचु बल्किरि पौरुल् ॥१६॥

तदर्थंब ना वच्चुट, यम्महात्मु नेरिंगितिवे नानतिम्मनि
 नंदनशोकम्मन नलंदुरुचुं दन मुंदर ब्रालु नाति गांचि
 भूतदयापारीणुंडगु ना-तंडिट्लनिये ॥१७॥

‘पौरुल् नोकु जेप्पिन तपस्विनि नेनचुमी, मनोहरा
 कारु भवत्कुमारु द्रुटिकालमुनं ब्रित्किंतु गानि मी
 यूरिकि ब्रियि सर्षपमुलय्यन देम्मोक कोन्नि, पुत्रु नि
 द्वारुणि नुंचु मेनु सविधम्मन नीवयि काचु चुंडेदन्’ ॥१८॥

मरियु नोक्क विशेषंबु गलदु विनुमु, जननीजनक पतिपुत्रादुल
 मरणम्मन नेन्नंडुनु नापन्नलु गानि पौरुल्यिंटिकि जनि
 यावलु यार्चिचि तेवल्यु जुमी!’ यनु सर्वार्थिसिद्धुनि वचनंबु
 लमंदानन्द संदोहंबु उदंबुनं दुदयिंपजेय गुमारु नट गुतलशार्थि
 जेसि मरलि राजगृहम्मन नोक गृहम्मन करिगि कलतेरंगु
 नोडिविना ना यिंटि मुत्तैदुव तनयोज्जीवनत्वरायमाण मानस
 यगु नापे किट्लनिये ॥१९॥

जननंबु न्मरणंबु जन्तुवुलकु न्स्वाभाविक, म्मेरिके
 ल्लिनिजंबौने? सुखंबुलेक्कडिवि तल्ली! येटि केडादियै
 ननु गालेदु प्रयोजकु न्सुजनमंदारंबु जेट्टंतवा
 निनि ब्रुत्रुं दिर्गाम्निगि रायिकरणि न्जीर्विचि यिट्लुंडने? ॥२०॥

आवलकु नेमि भाग्यमु,
 कावलसिन गोनुमटन्न, गन्नीरु कुच
 प्रावारमु दडुपग जनि
 या वीथि गलट्टि गृहिणुलंदर नडिगेन् ॥२१॥

‘बच्चेको बनमें साँपने डस लिया। यह मेरा इकलौता पुत्र है। लोगोंने कहा कि इस गिरिपर मेरे बच्चेको जीवित कर सकनेवाला तपस्वी है’ ॥१६॥

उसी महात्माके लिए मैं आई हूँ, अगर जानते हो तो बता दो। पुत्रशोकसे दुखी और अपने पैरोंपर पड़नेवाली उस स्त्रीको देख भूतदयानिरत उन्होंने कहा—॥१७॥

लोगोंने जिस तपस्वीकी बात तुमसे कही है, वह मैं ही हूँ। मैं तुम्हारे अति सुन्दर सुडौल पुत्रको पलभरमें जीवित कर सकूँगा। पर अपने गाँव जाकर थोड़ी-सी राई लाओ। पुत्रको इस धरतीपर लिटा दो। मैं तुम्हारे समान इसकी रक्षा करूँगा ॥१८॥

पर एक खास बात है। माता-पिता, पति-पुत्रादिके मरणसे आपन्न न बननेवाले लोगोंके घरसे राई माँग लाना है! ’सर्वार्थ सिद्धके वचनोंसे मनमें अमन्द आनन्दके उत्पन्न करनेसे, उस स्त्रीने पुत्रको भूमिपर लिटाकर, फिर राजगृहके एक घरमें जाकर सारी हालत बतलाई तो उस घरकी सुहागिनने तनयोज्जीवनत्वरायमाणमानसा (तनयको पुनरुज्जीवित करनेकी उतावली रखनेवाली) उस स्त्रीसे कहा ॥१९॥

‘जन्म और मरण तो जन्तुओं (जन्म लेनेवालों)के लिए स्वाभाविक हैं। कल किसके लिए सत्य है? सुख ही कहाँ है बिटिया! वर्षभर भी नहीं हुआ कि कुशल और सुजनमन्दार, हट्टे-कट्टे पुत्रको निगलकर हृदयको पत्थर बनाकर जीती नहीं रही? ॥२०॥

राईकी क्या कमी है? जितनी चाहिए ले लो।’ तब उसने आँसुओंसे आँचलको भिगोते-भिगोते उस मुहल्लेकी सब गृहिणियोंसे जा पूछा ॥२१॥

कन्नबिड्डलनेल्ल गंगपालोर्नरिचि
 ब्रतिकिन परम निर्भाग्युराँड्रु,
 दारुण्यमंद भर्तलु पेद्दनिद्दुर
 वडसिन दुरदृष्टवन्तुराँड्रु,
 जिरकालमुनकु वच्चिन चूलु गोल्पोयि
 वन्तचे गुन्दु चूलैतराँड्रु,
 बसितनम्मून मारिकसिमसंगिन तल्लि
 दन्डुल कडलु स्वतन्त्रुराँड्रु,
 गानि येंदुनु नडगिन करणि दनकु
 वलयु सिद्धार्थमु लोसुंगुवारु पुरमु
 नलगडल गानरारैरि नातिकात्म
 शिशुमरणदुःखवाधि शुष्कपजेय ॥२२॥

तनकं यावल निम्मं
 चु नडिगिन वेलंदि पुत्रशोकागिन रवि
 ल्चेनु ब्रावतनपौरी हृद
 यनलकगुप्तघन शोकहतचूर्णबुन् ॥२३॥

तन्नगरनिकेतनमुल
 कन्नितिकि नरिगि सुतुनकौषधमनि या
 पन्नलु तामेन्नडु गा
 कुन्न कुटुंबिनल वेदक नोकरुनु लेमिन् ॥२४॥

खिन्नयगुचु राजपुत्राधिष्टितंबगु गिरिकंदरंबुनकु जनि कनि
 ओक्कि कडचिन वृत्तांतंबु देल्पिन नातडल्लन नगुचु नम्म
 गुव किट्लनिये ॥२५॥

समस्त सन्तानको गंगामें बहाकर, जीनेवाली अभागिनियाँ, तारुण्यमें ही पतियोंके मरनेपर भी जीवित नारियाँ, चिरकालके बाद आई गर्भके स्रावसे दुःखी स्त्रियाँ, बचपनमें ही काल-कवलित माता-पिताओंके लिए बिलखनेवाली अनाथ नारियाँ, पर नगरके चारों कोनों ऐसी कोई नहीं मिली जो सिद्धार्थके वचनानुसार राई दे सके और उसके शिशुके मरण रूपी दुःखके समुद्रको सुखा सके ॥२२॥

अपने लिए राई माँगनेवाली उस स्त्रीकी पुत्र-शोककी अग्निने नगरकी स्त्रियोंके हृदयोंमें सुप्त शोक अग्निको प्रज्वलित किया ॥२३॥

उस नगरके सभी घरोंमें जाकर, कभी विपन्न न होनेवाले गृहस्थोंके हाथके औषधिकी याचना करनेपर उसे ऐसा कोई न दिखाई दिया ॥२४॥

खिन्न होकर वह स्त्री गिरिकन्दरामें रहनेवाले उस राज-कुमारके पास गई और उसने उसे नमस्कार कर, सारा वृत्तान्त कह सुनाया तो वे मुस्कुराकर बोले ॥२५॥

' मरणंबु सर्व सामान्यंबु दुःखंबु
 गांचनिवार लोकमुन लेह,
 निजमिदि यनुमाट नीयंत नीकु गो
 चरमुगा नी युक्ति सलिपिनाड,
 नीदृश दारुण खेदम्मुलकु गत
 मेदियो तेलियग नैचि नेनु,
 विरुगुचुनुझाड देलियुटके प्राण
 मैननु विडुचु साहसमु कलद
 टंचु बोधिचि पुरमनु कापे नंपि
 रत्नगिरि सानुवुलयंद राजसुतुडु
 प्रागति वसिंचुचुनु ॥२६॥

मरण तो सर्वसाधारण है। दुखी न होनेवाले इस संसारमें कोई नहीं हैं। यह सच है। तुम्हें समझानेके लिए मैंने यह सब उपाय किया है। इस जैसे दारुण खेदोंके कारणको जाननेके लिए ही मैं इस तरह घूम रहा हूँ। जाननेके लिए जान भी देने तैयार हूँ। इस प्रकार समझा-बुझाकर उसे भेज दिया और यथापूर्व रत्नगिरिकी कन्दराओंमें रहने लगा ॥२६॥

२. बुद्ध चरित्रम् (नगर दर्शन)

मरियु नट्टियेड देवतलय्येडकु वच्चि तदेकगोचरलै ॥१॥

एंदुलकुं जनिंचिति, मरेमि योनचुंचुनुंदि, वी जगं
 बंदु नहिंस येल्लेडल व्याप्तमोनर्पुमु, राज्यपालनं
 बंदुनु निट्टिसौख्यमुलयंदुनु मुन्गक व्यर्थमेन वे
 ड्क दिगद्रावि वैळमुपकारमु लोकुलकुं बोनर्पुमा ॥२॥

अनुचु प्रतिपदंबुनु बोधिंचुंचुंड सिद्धार्थुंडोवकनाडु प्रपंच विशेषम्मुल
 नेरिगि तदुपकृतिकि यत्तिनप दलचि चित्र यनु नोकदासि नडिगिन,
 नय्यवि
 'महात्मा ! यी यवि वचिप ना बोटि बोटि केट्लु साध्यंबा ? यी
 विशेषंबुलु देवर चनि कनिन देटतेल्लंबुलगु' ननुडु नतंडट्ल काक
 यनि चेन्नुडनु सारधि बिलिचि ॥३॥

ऊरंतयु गनुगोनवले
 देरायत्तं बोर्नचि तेम्मन, नूरी
 कारंबनि वाडरिगिन म
 हाराजुनकुन्वाचिचेनदि येल्ल वडिन् ॥४॥

राजुविनि कोडुकुनकदि, राज्यकांक्ष
 गा दलंचि पुरम्मधिकम्मुगा न
 लंकरिपंग जाटिचे बोक्मुग न
 लंकरिचिरि पौरुलिलधवाज्ञ ॥५॥

२. बुद्ध चरित्र (नगर दर्शन)

फिर ऐसे समय देवता लोग वहाँ आकर उसे ही दर्शन देते हुए—॥१॥

‘जन्म क्यों लिया ? फिर कर क्या रहे हो ? इस जगत्में अहिंसाको परिव्याप्त करो। राज्यपालन और इतर सुखोंमें मन न लगाकर, इन व्यर्थ विलासोंको छोड़कर, शीघ्रही लोकका हित करो’ ॥२॥

इस प्रकार प्रतिपदपर प्रतिबोधित करते देख, संसारकी विशेषताओंको जानकर ही उसके उपकार करनेके प्रयत्नके लिए सिद्धार्थने एक दिन चित्रा नामक दासीसे पूछा। उसने कहा—‘हे महात्मा ! मुझ जैसी स्त्री उनका वर्णन क्या कर सकेगी ? आप स्वयं जाकर देख लें तो सबकुछ मालूम हो जाएगा।’ उसने भी उचित समझकर ‘चेन्न’ नामक सारथीको बुलाकर कहा—॥३॥

‘सारे नगरको देख आना है, रथ तैयार करो।’ सिद्धार्थकी आज्ञा मानकर, उसने शीघ्र गतिसे जा, महाराजको इसकी सूचना दी ॥४॥

राजाने यह सुनकर सोचा कि यह, पुत्रकी राज्यकी आकांक्षा है। उसने नगरको समलंकृत करनेकी घोषणा करवाई। नागरिकोंने भी राजाकी आज्ञाको मान नगरको खूब सजाया ॥५॥

गुड्डिवांडुनु गुष्टरोगुलुनु गुंति
वांडु रिक्तजनलु शोक वन्तुलादि
गा गलगु वारलेय्येडगानि वीथु
लंदु गान्पिंपकुंड राजानतिच्चै ॥६॥

कम्बुलपंडुवौ गति दगं बुरमित्ललंकरिप, ना
चेम्बुडु देरु नायितमु चेषुडु, रामुतडंतं बट्टनं
बुम्बलुवंकलंगनग बूर्णतरोत्सवमोप्प नेगि कां
चे घरुलंदुगलोडु विशेषमुलन्मदिकेक्कुनट्लुगन् ॥७॥

इट्लु कोंतवडि वीक्षिचि मरलि स्वस्थानंबुनकरिगि सुखंबुंडे ;
नाटिनिशीथम्मुन शुद्धोदनुनकु स्वप्नम्मुननिट्लुकननय्ये ॥८॥

भानुडुनु निन्द्रचापंबुलोन गलगु
नोकपताक यनिलमुन नोरगि नेल
बडिन गोंदरु सन्यासिक्करुलु दानि
गोनि जनिरि तूर्पु दिक्कुनकुनु गडंगि ॥९॥

दक्षिणघंटापथमुन
नक्षतगति बदिगजम्मुलरुगग नन्दुं
दक्षतगलतोलि येन्गुन्
शिर्क्षिच्चुच्चु नेक्कि चनिये सिद्धार्थुंडुन् ॥१०॥

हरलोक नालुगु गडु स
त्वरमुनलागंग जनु रथम्मुन दा सु
स्थिरुडै सिद्धार्थुंडु सुं
दरमूर्ति मुदमुन जनिये दनयन्त वेसन् ॥११॥

सोबगु चित्रमुल्लेदुनंचुलनु दनरु
गनकमयमुलु माणिक्य खचितमुलुनु
नगु नरमुलोप्प नलरु रथांगमोक्क
डोक्कयेड नोप्पे गम्बुलकक्कजमुग ॥१२॥

राजाने आदेश दिया कि राजमार्गोंपर कहीं भी अन्धे, कुष्ठ रोगी, लँगड़े, दरिद्री, दुःखी जन न दिखाई दें ॥६॥

इस प्रकार नगर नेत्रानन्दकर रूपसे सजाया गया । चन्नके रथ तैयार कर लानेपर, राजकुमारने पूर्ण-उत्सवसे जग-मगानेवाले नगरको मानव लोककी विशेषताओंपर ध्यान देते हुए देखा ॥७॥

इस प्रकार थोड़ी देरतक देख सिद्धार्थ, फिर अपने महलमें जाकर सुखसे रहने लगे । उस दिन रातको शुद्धोदनने एक स्वप्न देखा ॥८॥

सूर्य और इन्द्र-धनुष्य युक्त एक पताकाके जमीनपर गिर पड़नेपर, कुछ संन्यासी जन उसे ले पूर्व दिशाकी ओर गए ॥९॥

दक्षिणके राजपथपर बेरोक टोक दस गज ही गये होंगे कि वहाँ कार्यदक्ष प्रथम गजराजपर शासन चलाते उसपर चढ़कर सिद्धार्थ चलते बने ॥१०॥

चार घोड़ोंसे शीघ्र गतिसे खींचे जानेवाले रथपर सुस्थिरतासे बैठ सुन्दर आकारवाला सिद्धार्थ प्रसन्न होकर चले ॥११॥

सुन्दर चित्रोंसे युक्त किनारों और स्वर्ण-माणिक्य खचित आरोंसे युक्त आश्चर्यप्रद एक रथ-चक्र दिखाई पड़ा ॥१२॥

ओक गिरिवरंबुनन्दु बोल्पोंदु नोक्क
भेरिक नयोमयंबगु पेद्दकरं
गरमुनंगोनि ढांकृति गडलुकोनग
नट्टे कोट्टुचुनुंडे सिद्धार्थुडेलमि ॥१३॥

पोडवुन दनर्चु नोक्क गोपुरपु शिखर
मन्दु गूर्चुंडि पवमुलु हस्तमुलुनु
जाचि योकडु रत्नम्मुलु चल्ल ग्रिन्द
नेरिकोनुचुंडिरोक कोदरिवलनवल ॥१४॥

ओक यार्गुरु जनलोकचो
विकलत्वमु मोगमुलुंदु वेलाडग बं
ड्लु कोरिकिकोचु नजत्रा
त्तकलुषिताक्षुलयि येगसागिरनदलै ॥१५॥

इट्टली येडु कललंगांचि मेलकांचि शुद्धोदनुंडु दनकुं गीडु मूडुननि
शांकिचुचु गोल्लवुकूटंबुनकु वच्चि सभासदुल नवलोकिंचि स्वप्नवृत्तातंबु
वचिंचिन नंदोक विद्वांसुडु राजा ! नी स्वप्नंबुलकु फलंबुलिट्टिवि
यनि क्रमंबुग जेप्प दोडेंगे ॥१६॥

सूर्यबिंबमुवंटि संशुद्धुडोकडु
टेक्कमुनु बोलिनलदेस नुक्कु मिगुलु
ब्राक्स्थिताचारमडचि प्रबलग जेयु
मंचि याचारमुनु भुवि नंचितमुग ॥१७॥

आ पविगजम्मूलन बुद्धिकगु तेरुवुलु ;
मोदटिकरि नेक्क येगुटप्पवि तेरुवुलु
यंदु सत्यमार्गम्मुनयंदु दविलि
येगु नोकसिद्धुडनुट युर्वीशमौळि ! ॥१८॥

एक पर्वत श्रेष्ठपर शोभित नगाड़ेको लोहेका एक बड़ा डण्डा हाथमें लेकर सिद्धार्थ बजा रहे थे, जिससे ढमा-ढमकी बड़ी आवाज निकल रही थी ॥१३॥

एक ऊँचे गोपुर-शिखरपर बैठकर, हाथ-पैर पसारें कोई रत्न बिखेर रहा था। नीचे जमीनपर इधर-उधर खड़े लोग, उन्हें चुन रहे थे ॥१४॥

एक जगह कोई छः लोग जिनके चेहरोंसे विकलता टपक रही थी, दाँत पीसते हुए, आँसुओंकी धारासे कलुषित नेत्र-वाले, और अनाथ दशामें जा रहे थे ॥१५॥

इस प्रकार इन सात स्वप्नोंको देख, हानिकी आशंकासे शुद्धोदन सभामें आए और सभासदोंको देख, स्वप्नवृत्तान्त कह सुनाया। तब एक विद्वान उन स्वप्नोंके फलका, क्रमसे, विवरण देने लगा ॥१६॥

सूर्यबिम्बके समान संशुद्ध एक व्यक्ति, पताकाके समान चारों दिशाओंमें परिव्याप्त हो प्राचीन आचारोंका दमन कर, अच्छे और पवित्र संप्रदायका प्रचार करेगा ॥१७॥

वे दस गज बुद्धिके दस मार्ग हैं। पहले हाथीपर चढ़ने का मतलब है उन दसों मार्गोंमेंसे सत्यमार्गपर एक सिद्ध पुरुष चल पड़ेगा ॥१८॥

अरदमुनु लागु नालुगु
 ह्रलंगनुगोटिवधिप ! यवि ज्ञानपु वे
 ल्तरु जूपु चतुर्वर्गमु ;
 परिपाटिग जूडु दीनि भावबेल्लन् ॥१९॥

नाना चित्रयुतमु र
 त्नानीक स्थगितमुनगु नल चक्रबे
 तेनीतिरीतिकि ब्रपं
 चानून विशेषमुलकु व्यंजक मधिपा ! ॥२०॥

नी कोडुकु भेरिगोट्टुचु नीकु गान
 बडुट कथंबु देल्पेद बार्थिवेद्र !
 लोकमुलकेल्ल देलियग 'नेकमेव'
 यनेडि श्रुतिनि जाटिचुट यरयुमेडद ॥२१॥

गोपुरमु ज्ञान शास्त्र मग्गोपुरम्मु
 नुंडि रत्नमुल जिम्मुटोड्ल केल्ल
 दानि नुपदेशमोसगुविधम्मु, रत्न
 निकरमेरुट ग्रहियिचु नियति यधिप ! ॥२२॥

मोगमुलु वाडग नार्गुरु
 पोगुलुट तम मतमु वोव बूर्वाचारा
 नुगति जगतिकिं देल्पुचु
 नेगडु गुरुबुलेडुचुटयनि येरुगु मधिपा ॥२३॥

अनि चेप्पिन नप्पलुकुल चन्दम्बु विनि यी येडु स्वप्नंबुलकु
 बर्यवसितार्थम्बु तनूजुंडु सन्यासिचुटका यनि कृतनिश्चयुंडे ॥२४॥

रथको खींचनेवाले चार घोड़ोंको देखा है न राजन् !
वे ज्ञानके प्रकाशको दिखानेवाले चतुर्वर्ग हैं। यह भाव तो
सम्प्रदाय-सिद्ध है ॥१९॥

नाना चित्रोंसे युक्त, रत्नोंसे जड़ा हुआ वह चक्र तो
नीति-रीति और संसारके अनून विशेषोंको सूचित करने-
वाला है ॥२०॥

सुनो राजा ! तुम्हारे पुत्रके नगाड़ा बजाते दीखनेका
अर्थ बताऊँगा। वह तो सारे संसारमें 'एकमेव' वाले
श्रुतिकी घोषणा करना है ॥२१॥

गोपुर तो ज्ञानशास्त्र है, उस गोपुरसे रत्नोंको बिखेरनेका
अर्थ है, उस ज्ञानका उपदेश देना। उस रत्न-समूहको चुन
लेनेका मतलब है, उस ज्ञानोपदेशको ग्रहण करना ॥२२॥

उदास चेहरे लेकर छह जनोंका दुखी होना, अपने-अपने
धर्मोंके परास्त होनेकी स्थितिका ज्ञान कराते हुए इन धर्म-
गुरुओंका रोना है, जो प्राचीन आचारोंका उपदेश देते हुए
उच्च दशाको प्राप्त किए हुए थे ॥२३॥

इन वचनोंको सुन, इन सात स्वप्नोंका परिणाम तो
मेरे पुत्रका संन्यास ग्रहण करना है। यह समझ और
कृतनिश्चय होकर—॥२४॥

मुनपटिकघ्नन् नेक्कुडु
 जनुल गापुंचि पूर्वसदनंबुन नं
 दनु नुंडजेसे ; नेंदुं
 जनकुनकुं बुत्रु विडुव सम्मतमगुने ॥२५॥

आसिद्धार्थुडु पूर्वरीति मरुनाडा चेन्नुनि गूडि प्रो
 लासं गन्गोनुचुन् मूर्ति गनु जनुं, प्राणंबु शेषंबुगा
 गासि जेंदेडु वानि, बेक्कुलगु रोगंबुल्यथं गूर्प सं
 त्रासं बोंदेडुवानि दा गनि मदि दापप्रकोपंबुनन् ॥२६॥

केलननुन्न चेन्नु नडिगि कीडु मेलु
 लात्म बट्टिचुकोनुचु नट्लरुग नरुग
 वेरोकट जुट्टु बन्दुगुल्वेक्कि वेक्कि
 येडुव वचचेडु सबमोक्कडेदुरु पडिअे ॥२७॥

कोमरु डगियु गुंडयु गोनि नडुवग
 वक्त्रमोक्कित गन्पट्ट वस्त्रसंव
 तंबुगा जेसि पाडे पै दग बरुंड
 बेट्टि नल्वुरु वह्णियप वेडले शवमु ॥२८॥

पदपडि कंकगृथमुखपक्षिसमाकुलमुन्निवारवा
 स्पदमु ननेक वाहक शव प्रचुरम्बुनु नैन वल्लका
 टि दरिनि बेट्टि या शवमु डेप्परमै चनु वह्नि गाल्प बू
 डिदयगुडु नृपालसुतुडेंदमु चन्दमु भिन्नभिन्नमै ॥२९॥

विवशंबगुटयु जेन्नुनि
 नवलोकिंचि 'मनमिट्टु ल्गुदुमे?' यन, वा
 डु वलुकु सिद्धार्थुनिकि ग
 लविधं बिप्पगिदि दा गलंगेडि मदितोन् ॥३०॥

पहलेसे भी अधिक संख्यामें लोगोंको रखवालीपर नियुक्त कर, पहलेके महलमें ही पुत्रके रहनेका प्रबन्ध करवाया। कहीं भी पुत्रसे विलग होना पिताको अच्छा लगता है ॥२५॥

सिद्धार्थ भी पहलेके दिन की भाँति, उस दिन भी चेत्रके साथ नगरको उत्सुकतापूर्वक देखने लगा। मरते हुए एक आदमीको, मरणके सिवा अन्य सभी कष्ट उठानेवालेको अनेक रोगोंसे पीड़ित, सत्रस्त एक व्यक्तिको देखा। उससे मनके तापके अधिक होनेपर—॥२६॥

निकटस्थ चेत्रसे पूछकर, भले-बुरेके ज्ञानको प्राप्तकर, जाते-जाते एक और जगह, रोते-पीटते रिश्तेदारोंसे घिरा एक शव सामने दिखाई पड़ा ॥२७॥

पुत्रके हाथमें आग और घड़ा लेकर चलते, मुखके सिवा सारे शरीरको वस्त्रसे ढाँपे हुए, जनाजेपर लिटा, चार व्यक्तियोंसे ढोए जाते, वह शव निकल पड़ा ॥२८॥

तद्दुपरान्त कंक (उकाब), गीध आदि पक्षियोंसे घिरे हुए, स्यारोंके निवास-स्थान और अनेक वाहक और शवोंसे भरे हुए श्मशानमें, उस शवको जलकर राख बनते देख, उस राज-कुमारके दिलके टुकड़े-टुकड़े होने लगे ॥२९॥

विवश मनसे चेत्रको देखकर सिद्धार्थने पूछा—‘क्या हमारी हालत भी ऐसी ही होगी?’ व्याकुल मनसे चेत्रने कहा—॥३०॥

‘पुट्टुटयु गिट्टुटयु मरि बुट्टुटयुनु
दिरिगि गिट्टुट यनुनदि देहधर्म ;
मेल तर्प्पिनगु ? जक्रमेट्टुलट्टु
ली प्रपंचम्मु तिरुगु भूमीशमौळि ॥३१॥

अनिन विनि यदि यंतयु मनंबुनकु गोचरंबु चेसिकोनि या
रुद्रभूमि विडिचि मरल नगर घंटापथंबुन वच्चुचुंडु ॥३२॥

सिरिचेडि बिट्टुवंगिन कसेरुकयुं गनुरेप्पलुं बर
स्परमु गर्दिचु मैवळुलु पातरलाडु शिरंबु सर्वमु
झरसिन कर्णलोममु लणगिन पिक्कल बलिम मोमुनं
दोरगेडि लाल गल्लु मुदितोक्कुनु गांचे गुमारुडोक्केडन् ॥३३॥

‘वडवड वडकुचु बदमुलु
तडबड हस्तमुन नोक्क दंडमु गोनि ये
व्वडु वच्चुचुंडु वीडनि’
यडिगिन नृपसूति किट्टुलने सारथियुन् ॥३४॥

‘रूपमडंगु बुद्धियुनु रूपरु देहबलबु ऋंगु सं
तापमु हेचु नाशलुन् दामरतंपरलै जनिचु वि
द्यापटिंभु तग्गु विषयंबुलु बोल्परु देनि प्रापुनं
दापरमय्ये ना जरयनंदगु रोगमोकंडु वीनिकिन् ॥३५॥

चवि येरुगमि यिन्द्रिय पा
टवमुनु लेकुट पंड्लडंगुटयुनु मु
झवु विधमुलु दलपग रे
डव बाल्यमु सुम्मु मुदिमि यवनींद्रसुता ! ॥३६॥

अनविनि बुद्धुडु चित्तं
बुन गूरिन वन्त पेमि बोरिबोरि नालो
चन मोनरुचुचुं जनिये स
वनमुनकुं बनिवि पनिवि तत्तरमोलयन् ॥३७॥

जन्म लेना और मर जाना फिर जनमना और फिर मरना, यह तो देहीका धर्म है। इससे छुटकारा कैसे प्राएँ ? यह सारा संसार चक्रकी नाई घूमता रहता है ॥३१॥

यह सुन और सब कुछ समझकर, उस रुद्रभूमिको छोड़ नगरके राजमार्गसे जाते समय—॥३२॥

शोभा रहित, बहुत झुकी रीढ़, गिरी पलकें, एक दूसरेसे चिपकनेवाली शरीरकी झुरियाँ, काँपनेवाला सिर, कानके पके बाल, कमजोर पिंडलियाँ, मुँहसे टपकनेवाली लारवाले एक बूढ़ेको राजकुमारने देखा ॥३३॥

‘थर-थर काँपते हुए और लड़खड़ाते पैरोंसे, हाथमें डण्डा लिए आनेवाला यह कौन है?’ ऐसे पूछनेवाले राजकुमारसे सारथीने कहा ॥३४॥

जिससे रूप विनष्ट हो जाता है, बुद्धिका नाश हो जाता है, शारीरिक बल कम हो जाता है, दुख अधिक होते हैं, इच्छाएँ निरन्तर उत्पन्न होती रहती हैं, विद्याकी पटुता कम हो जाती है, और विषयोपभोगकी शक्ति नष्ट होती है, ऐसा ‘जर’ (बुढ़ापा) नामक एक रोगने इसे आ घेरा है ॥३५॥

स्वादको न जान सकना, इन्द्रिय-पटुताका न होना, दाँतोंका न होना, इन अनेक विषयोंमें बुढ़ापा दूसरा बाल्यकाल ही है ॥३६॥

यह सुनकर मनमें उत्पन्न चिन्ताओंके कारण बारम्बार विचार करते हुए बुद्ध परेशान-से अपने सदनको गए ॥३७॥

३. सन्ध्या-वर्णन

अवधरिपु मनंतरंबब्जबन्धु
 नंदु रागातिशयमेक्कुडै चेलंगे
 स्वगतुडगु हरि वरुग गोर गर्मकिच्चु
 लक्षणकु गल रक्ति देल्पनोयनंग ॥१॥

अंबुजबन्धुडु पूर्णत
 रंबै यर्थमयि कोंतराणिच्चियु सू
 क्षमंबै तगुंबिबमुन ग्र
 मंबुगदा पश्चिमाद्रि माटुन करिगेन् ॥२॥

हरिदश्वुडु तन गृहमुन
 करुदेंचे नटंचु पश्चिमांबुधिमणुलन् ।
 गरमुन गानुकोसंग द
 दरुणच्छवि बोलचे ननग नरुणुंडेसगेन् ॥३॥

पश्चिमाचलमुन गान्ति परिढविल्ले
 गानि तूरुपु गोंड रिक्तदशनंदे ;
 ' नोकडु चेडिपोवु पै गानि योकडु बागु
 पडुटले ' दनि जनुलाडुपलुकु निजमु ॥४॥

वारकान्तनु वदलि यंभोरुहाप्तु
 डरिगिनन्तन यद्दानि नंदुकोनग
 दममरुगुदेंचे, वारकान्तलकु दगिन
 वाडु वीडिन दुरवस्थ वच्चुटरुवे ॥५॥

३. सन्ध्या-वर्णन

सुनिए । उसके बाद अम्बुज-बन्धु (सूर्य) में राग (प्रेम, अरुणिमा) अधिक होने लगा, मानों मनमें हरिको वर (प्रिय) के रूपमें चाहनेवाली लक्षणाकी रक्तिमा (प्रेम लालिमा) को प्रकट कर रहा हो ॥१॥

अम्बुज-बन्धु पहले पूर्ण फिर आधे बन कुछ शोभा दे, फिर सूक्ष्म बने बिम्बवाले हो शनैः शनैः पश्चिम पर्वतकी आड़में चले गए ॥२॥

हरिदश्व (सूर्य) अपने यहाँ पधारे, इस प्रसन्नताके मारे पश्चिम सागर अपने करकमलोंमें मणियोंके उपहार ले उपस्थित हुआ । मानों उन मणियोंकी रक्तिमा (अरुणिमा) से सूर्य चमक रहा था ॥३॥

अस्ताचलपर प्रकाश फैल गया परन्तु उदयाचल कान्तिहीन बना रहा । 'एकके बिगड़नेपर ही दूसरेका फायदा होता है ।' जनताके इस कथनमें सत्य है ॥४॥

वारकान्ता (दिन रूपी स्त्री) को छोड़ अम्भोरुह-आप्त चल दिए तो उसे ग्रहण करने तम (अन्धेरा) आया । किसी योग्यके छोड़ देनेपर वारकान्ताओं (वेश्याओं) की दुर्गति होनेमें आश्चर्य नहीं है ॥५॥

अंबुजमुल् चलिचे, बतगावळि मूळ्ळकु जेरवच्चे, दी
रबुल नुडि विप्रुलु करबुलडंबुग नीरु कावि व
स्त्रबुल संपुटबुलु पोसग गृह्बलकेगुदेचि, र
भरबुन सज तग्गे, विरवाररे दमबु क्रमबुगा देसल् ॥६॥

कोडलन्नियु गाटुक कोडलय्ये
जेट्टु लन्नियु जीकटिचेट्टु लय्ये
बडुलन्नियु नेरेडु पडुलय्ये
नेमनगवच्चु दामसीदीमसबु ॥७॥

जलज जलजबन्धु शरदभ्रमुलयदु
गल्लु रागमेल्ल गालिसि जार
जारिणी मन प्रचारबु गाविप
बोलु लेकयुन्न बोवुटेटलु ॥८॥

गगनमनु गनि पेर्कालचि कालपुरुपु
डुदुगल वच्चमल वयिनमरवेट्टु
च्चन्न पोलिक ग्रममुगा नोक्कटोकाटि
गा ब्रकाशिचे दारकत्तगमुलुगट्टि ॥९॥

वेल वेल बाररे दूर्पु देस वेविळ्ळुलोप्पिनमीद गर्भिणी
ललन गोगबु वोल्ले , शुभलक्षण लक्षितुडै दिगगना
तिलकमु सोपुनन् दगि प्रतिक्षणवर्द्धित कान्तिसपदल्
चेलगग जदुरुडु वोडिचेन सगपालु तमब्रडगगन् ॥१०॥

कलुवलपालिटि पुन्नेमु
कुलुकु जवराडुपालि कोरिक्क गजदो
गलपालिटि मृत्युवु वे
नेलरायडु वेलिगे विरहिणी शत्रुडे ॥११॥

अम्बुज विचलित हुए, पक्षी समूह अपने नीडोमें आ गया । नदीतीरोंमें विप्रजन हाथोंमें हाथोंके लाल रंगके कपड़े लिए (सन्ध्या स्नान कर) धर लाट पड़े । आकाशमें सन्ध्याका प्रकाश कम होता गया आर धीरे-धीरे चारों तरफ अंधेरा छा गया ॥६॥

तामसी (रात्रि) की सामर्थ्यकी बात क्या कह ? उसके पराक्रममें सभी पर्वत काजलके पहाड़, सभी वृक्ष तमाल वृक्ष और सभी फल जामुन बन गए ॥७॥

जलज आर जलजबन्धुमें प्रकाशित शरत् कालके मेषोंका मारा राग (अर्चना, प्रेम) कहा चला गया ? हा, जार-जार्णिके मनमें वह (रागप्रेम) संचार करने गया होगा । वरन् आर कहा जाता ॥८॥

मानो गगनकी खानमें तारकम्पी हीरोंको काल-पुरुष निकाल-निकालकर मजा रहा हो, तारे क्रममें समझोमें प्रकाशित होत लगे ॥९॥

पूर्व दिशा पंसी फीकी पड़ गई जैसे उकोनोक बाद गर्भवतीका मुख हो । समलक्षण संयुक्त हो दिग्बन्धक ललाटके तिलकके समान प्रतिक्षण वर्द्धित ज्ञानि, सम्पत्तिवाले चन्द्रका उदय हुआ जिनमें अन्धकार आधा कम हो गया ॥१०॥

मानो उत्पलोक भाग्य हो, विलीगिनो घनतियोंका अभी-मित हो, चोरोंके लिए मृत्यु हो, आर विरगर्तगयाका शत्रु हो, उस प्रकार चन्द्रिकाओंका राजा प्रकाशित हुआ ॥११॥

केरे जकोरमुलेल्ल ; वि
घारम्मुन मुनिगे जक्रदंपतुलु ; जलं
दूरेभ्नेलरालन् ;
कूरेन् दंपतुल्लकिपु ; कोलकुलु तेरेन् ॥१२॥

पद्मिनीकान्त तनु जूचि पवलु नव्व
रात्रिनगसागे दानि गैरविणि चेलगि
येरिकेनियु नमवसयेगुमीद
राणनेसगेडि पुन्नम राकपोदु ॥१३॥

चकोरोंकी बन आई (जोर पकड़ने लगे), चक्रवाक दम्पति दुखी बने। चन्द्रकान्तशिलाएँ रसमय बनीं, दम्पतियोंके हृदय रसमय (प्रसन्न) बने। सरोवरका जल एकदम थिर हो गया ॥१२॥

दिनके समय पद्मिनीकान्ता परिहास करे तो अब उत्पलिनी उसे देखकर हँसने लगी। किसीके लिए भी अमावसके बाद शोभायुक्त पूर्णिमा आकर ही रहेगी ॥१३॥

४. पुरुरवृत्तचरित्र (देवी भागवत)

सुद्युम्न सुतुङ्घ घनस
पद्युतुङ्घ पुरुरवृङ्घ परिपालिचेन्
हृद्यनिरवद्य गुरुकौ
ति द्योतितमं तनरु प्रतिष्ठानपुरिन् ॥१॥

अप्पुरुरवृङ्घ राज्यबोनर्चुनेड सामादि चतुरुपायम्मलुनु प्रभु-
मंत्रोत्साह शक्तुलुनु सर्ववर्णाश्रम धर्मबुलुनु निरुपप्लवंबुलुन्ये ॥२॥

जघ्नमुलोनर्चे नातं
डेन्नेनियु निद्धमतुलकिडे विप्रुल क
त्युघ्नतमगु दानंबुल,
नघ्नघ्न ! नुतिप दरमे ? यातनि गुणमुल् ॥३॥

आतनि रूपसंपदयु नानृपुतेजमु नानृपालुनि वि
ख्यातियु ना धरापति युदारत याविभुशील मा जग
घ्नेत कृपाधिकत्वमुनु नेर्पुनु नीतियु भूतियुन् यश
स्फीतियुनेचि यूर्वशि वशीकृतयै वगजेंदु नंतटन् ॥४॥

पंकजोद्भवु शापंबु वलन बुडमि
करुगुट तटस्थमगुडु नय्यमरवेश्य
चिरमनः कान्तुडैन यघ्नरवरेष्यु
नेचि वरिंयिचु यतनि तो निट्टुलनिये ॥५॥

गोरियलु रेंडु नाकु गडुगूरुचु बिड्डलकघ्ननेक्कु; डी
गोरियलु ब्रौचुटोक्कटियु, गूटमिवेळल दक्क नीवु सि
गरि वसनंबुलेनि तरि गन्यडकुन्कियु नेयि भुक्ति कै
तरुचुग निच्चु नुन्कियुनु दप्पवु; तप्पिनयण्ड वीडेवन् ॥६॥

४. पुरुरवाकी कहानी

सुद्युम्नके पुत्र पुरुरवाने धन-संपत्तिसे युक्त हो, हृद्य और निरवद्य (निष्कलंक), गुरु (महान्) कीर्तिसे प्रकाशमान प्रतिष्ठान नामक नगरपर शासन किया ॥१॥

तब पुरुरवाके शासन कालमें सामादि चतुरुपाय, प्रभुमन्त्रो-त्साहकी शक्तियाँ, सर्व वर्णाश्रम धर्म उत्पातरहित हो, रहे ॥२॥

उसने कई यज्ञ किए, दीप्त मनस्वी विप्रोंको अति उन्नत दानादिसे तृप्त किया । उसके गुणोंकी प्रशंसा कोई नहीं कर सकता ॥३॥

उसकी रूपसंपत्ति, उसके तेज, उसकी विख्याति, उसकी उदारता, उसके शील, उसके कृपाधिक्य, कौशल, नीति, ऐश्वर्य और यशस्फीति (विस्तार) को देख वशीभूत हो, उर्वशी विरह व्यथित रहने लगी । तब— ॥४॥

ब्रह्माके शापवश, उसे धरतीपर आना पड़ा । तब उस अमरवेश्याने चिरकालसे मनमें बसाये हुए उस नरश्रेष्ठसे प्रेम व्यक्त करते हुए कहा— ॥५॥

“ मेरी दो भेड़ें मुझे अपनी लाइली सन्तानसे भी अधिक प्रिय लगती हैं । अगर मुझे चाहते हो तो उन भेड़ोंकी रक्षा करना, सम्भोग-समयके अतिरिक्त कभी नग्न नहीं दिखाई पड़ना और भोजनके लिए अधिक घी देना, आदि बातोंका स्वीकार करना भी अनिवार्य है । जब भी इन शर्तोंका पालन नहीं होगा, तभी तुम्हें छोड़ कर चली जाऊँगी ॥६॥

दीनिकंगीरिचितिवेनि नम्र
 गैकोनि रमिपुमनेडि यक्कलिकिमिन्न
 प्रतिन केदुराड वेरच्चि चेपट्टि दानि
 वलच्चि क्रीडिचे नोक कोन्नि वत्सरमुलु ॥७॥

तत्कटिस्थलमंदु दविलि चित्तमु धरा
 वलयम्मु पै नास गोलुपदय्ये,
 दानि नूगारू पै दविलि चित्तमु कत्ति
 चेतबूनुटकृ वांछिपदय्ये,
 तद्वचस्संसक्ति दविलि चित्तमु काव्य,
 कलना विनोदंबु दलपदय्ये,
 दानि कौगिटियन्दु दविलि चित्तमु परा
 द्वैत भावंबु पै बारदय्ये,
 अवुर ! थेमन्दु नप्पूरुवरुनि चरित,
 मखिल मूर्वशिये यनि यलरु गानि
 धर्ममथंबु मोक्षंबु दलपडय्ये
 गामुकुल कन्यसंगतुल गानबडुने ? ॥८॥

दुर्गमुडीनृपुडचु न
 नर्गळ रागातिशयमुनन् मरगि पुन
 निर्गममेरुगक यूर्वशि
 स्वर्गम्मुनु मरचे बाकशासनु मरचेन् ॥९॥

वारलिरुवुरु नी तीरुवारलगुचु
 नुन्नयंतट बाकारि यूर्वशी त
 लोदरीमणि रप्पिप नूह जेसि
 पलिके गन्धर्वुलनु जूचि प्राभवमुन ॥१०॥

अगर तुम्हें ये शर्तें स्वीकार हैं तो मुझे स्वीकार कर आनन्दसे रहो । ”

उस मनोज्ञ युवतीकी शर्तोंको इनकार करनेमें अपनेको असमर्थ पाकर उस राजाने शर्तें स्वीकार कीं और मनःपूर्वक सभी प्रतिज्ञाओंका पालन करते हुए प्रेमपूर्वक कुछ वर्षोंतक आनन्दसे उसने जीवन बिताया ॥७॥

उसका मन उसकी कटिकी कमनीयतापर इतना अधिक आकृष्ट हो गया था कि उसकी रोमावलिके सौन्दर्यने तलवारको हाथमें रखनेके वीर धर्मको भुला दिया । उसके वचनोंके प्रेममें मग्न मन काव्य-कला विनोदकी बात सोच न सका । उसके आलिंगनमें लगे चित्तको अद्वैतके श्रेष्ठ भावोंपर ध्यान नहीं रहा । अहा ! क्या कहें पुरुरवाके चरित्रकी बात ! वह उर्वशीको ही सब कुछ समझता रहा पर धर्म, अर्थ, मोक्षकी बात सोच न सका । ठीक है, कामियोंको दूसरे विषयोंसे क्या लगाव ? ॥८॥

इस राजाकी संगति कष्ट-साध्य है, यह समझकर उससे अनन्य प्रेमकर, मोहातिशयमें बँध, उर्वशी फिर वापस जानेका मार्ग न जान, स्वर्गको और इन्द्रको भी भूलकर रही ॥९॥

जब वे दोनों इस प्रकार थे, तब इन्द्र उर्वशीको वापस बुला लानेकी इच्छासे, प्रभुतायुक्त वाणीसे गन्धर्वोंसे बोले ॥१०॥

रंभमोदलुग नप्सरोरमणुलुघ्न
 वारलैननु नूर्वशी वनित लेक
 घुन्नकारणमुन स्वर्गमुन्नदिपुडु
 चन्द्रकळ लेनि यंवरस्थलम् पगिदि ॥११॥

कावुन नेदेनि योक नेपम्मुन बुरुरघु वंचिचि गोरियल
 नपहर्हरिचिन गार्यम्मु पोसगूननि चेप्पि पंचिन ॥१२॥

गन्धवुलु रतिकळी
 बन्धुरुडगु नृपति केरुगबडकुडंग धौ
 र्धर्यपटिम गोरियल
 नंधतमसमंद्र जोरुलै हरियिपन् ॥१३॥

आयुरणम्मूल मेमे
 मे यनि रोद सेय दन्निमित्तमेरिगि सी !
 सी ! यनि रोयुचु नृपुतो
 ना यूर्वशि शोक्तप्तयं यिट्लनियेन् ॥१४॥

कोडुकुल वले बैचुकोनुचुन्न ना गोरि
 यलनु जोरुलिदटुलपहर्हरिप
 नाडुवानिकन्न नधमुंडवै यूर
 कुंट युक्तमगुने ? कुवलयेश ! ॥१५॥

रक्षिचेदवीवंचुनु,
 पेक्षयोर्नचितिनि गानि येरुगनयिति नी
 दक्षत यिट्टिदि यनि यो
 कुक्षिभर ! निम्नगूडि कुत्सितनैतिन् ॥१६॥

“रम्भा आदि श्रेष्ठ अप्सराओंके रहनेपर भी, जो उर्वशीकी अनुपस्थितिमें कान्तिहीन ही बना हुआ है, यह स्वर्ग चन्द्रकलारहित अम्बरके समान है” ॥११॥

अतः पुरुरवाको धोखा देकर अथवा अन्य कोई-न-कोई उपाय करके, वहाँसे उर्वशीकी भेड़ोंको चुरा लाओ तो हमारा काम बन जाएगा। इस प्रकार आदेश देकर भेजनेपर ॥१२॥

रतिकेली बन्धुर उस राजाके ज्ञानके बिना ही, धुरन्धर पटिमावाले वे गन्धर्व, अन्धकारमें उन भेड़ोंको हर ले गए— ॥१३॥

उन भेड़ोंकी आवाजका शोर-गुल सुनकर तथा उसके कारणको जानकर उर्वशी ‘छि! छि!!’ करती हुई, शोकसंतप्त होकर, इस प्रकार बोली ॥१४॥

पुत्र समान पालित, मेरी भेड़ोंको चोर इस प्रकार हर ले गए। हे राजन्! ऐसी स्थितिमें स्त्रीका-सा डरपोकपन क्या तुम्हें शोभा देगा?” ॥१५॥

यह सोचकर कि तुम तो रक्षा करोगे ही मैं भी लापरवाह बनी रही। मैं नहीं जानती थी कि तुम्हारी सामर्थ्य इतनी-सी है। हे कुक्षिभर! तुम्हारी संगतिसे मैं भी कुत्सिता हो गई ॥१६॥

इदु कटकट बडि तभुं
 बेटिलिपडदिदुचुभ्र प्रियुरालिकि न
 ककटिकमु चूपुटकं नि
 षपटुडै तस्करुल वेंट बडि परुगिडियेन् ॥१७॥

नगनुडै वच्चु नृपति चंदम्मु नूर्व
 शीवनित केरुग बडग जेयुनिच्च
 जंचलाकान्तुलनु मेरंपिचिरपुडु
 धरणीपति गेहमंडु गंधर्वपतुलु ॥१८॥

अन्त ॥१९॥

उरणम्मलु गोंचु दिगं
 बरुडै तोतेंचु नृपति बरिंकिचि विय
 च्चर वारवनित यातनि
 चरणमुलकु म्रोक्कि पलिके साध्वसमेसगन् ॥२०॥

चेप्पिति गादे ? मुन्नु नृपशेखर ! नादु प्रतिज्ञ ; दानिकि
 दप्पिन यट्टि नीदु दरिदापुन गापुरमेट्ट्लोनर्तु ? ने
 निप्पुडपोवलेन् गरुणयिंचुक नापयिनुंचु ; मय्ययो
 तप्पकतीरुने ! विधिविधानमु तप्पिन पट्ल गूरुमुल् ? ॥२१॥

अनि यूरिंडिचि ॥२२॥

पाथिवोत्तमु बलवंतपालु जेसि
 यरिगे नूर्बंशि निश्चिन्तयै तनन्त
 स्वर्गमुननुंडि वच्चिन वच्चुगाक
 यम्मरो ! चेल्ल ! लंजेल नम्मदगुने ? ॥२३॥

इस प्रकार दुखी बन, भला-बुरा कहनेवाली प्रियतमापर दया दिखानेके लिए, राजा नंगा ही चोरोंके पीछे दौड़ पड़ा ॥१७॥

नग्न दशामें आनेवाले नृपतिको उर्वशीके दृष्टिगत करनेके लिए, गन्धर्वराजाओंने धरणीपतिके गृहको चञ्चलाकी कान्तियोंसे भर दिया ॥१८॥

तब ॥१९॥

भेड़ोंको ले नग्न दशामें आनेवाले राजाको देख, वह वियच्चर वेश्या (देव वेश्या) उनके चरण छूकर सहमें हुए स्वरमें बोली ॥२०॥

हे राजन् ! अपनी प्रतिज्ञाके बारेमें मैंने तो पहले ही कह रखा था। तुमने उसका पालन नहीं किया, अतः उससे वञ्चित होनेवाले तुम्हारे साथ अब मैं कैसे रह सकूंगी ? मुझे अभी ही चला जाना चाहिए। मुझपर कृपाभाव बनाए रखो। हाय ! जब विधिका विधान न रहे तो प्रेम भी छूटे बिना कैसे रहेगा ? ॥२१॥

इस प्रकार सान्त्वना दे कर ॥२२॥

पृथ्वीशको दुःखोंमें डाल, निश्चिन्त भावसे उर्वशी चली गई। स्वर्गसे ही उतरकर क्यों न आई हों पर वारविलासिनियों पर भरोसा कैसे रखा जाए ? ॥२३॥

तनुविडनाडि यूर्वशि यथागति नेग, ब्रुरवुंडु चि
 तनुगोनि, वेरिबूनि, मतिदप्पि, तदीय विलास वैखरुल्
 मनमनु नेचुचुन् विषयमगत जेदुचु लोन गुंदुचुं
 जनि चनि कांचे नच्चटुलचारु कटाक्षगतिन् गुरुक्षितिन् ॥२४॥

चूचिनन्तन यातनि लोचनम्मु
 लतुलितंबेन सन्तोषगति नेसंगे
 जिरविरह संगतुलकु नेच्चेलिनि गनुट
 कन्न वेरोडु भाग्यंबु गलदे तलप ॥२५॥

अट्ल कनि डगगरि करुणरसंबुट्टिपड गद्गदगळुंडे इट्लनिये ॥२६॥

किनिसियेहंगनेन्नडुनु ; गीडोर्नारिचियेरुग ; नीकु दा
 सुनिगतनुंदिगानि योकचो नयिनन् ब्रति जेप्पलेदु ; नी
 पनिचिन कार्यमेप्पुडु नेपंबिडि च्येक युंडलेदु ; हा !
 ननु विडनाडि पोतिविदि नायमे ? नीकु गुरंगलोचना ॥२७॥

ओसी ! दुर्मागुराल ! नन्नीसार्डिचि
 तेनि यीमेनु ने भरियिप जाल
 ना मनमोर्रिगियुनु गठित्वमून
 बलपु बूनेदवैतटिदानवययो ॥२८॥

बलचि ननुगलयनेटिकि ?
 गलसि इटुल् विडिचि पेट्टेगानेटिकि ? नी
 बलपु सतमंचु नम्मिति,
 गलिकी ! ननुजिन्त पालुगा जेयुदुवे ॥२९॥

उर्वशीके द्वारा इस तरह परित्यक्त होनेपर पुरुरवा चिन्तित हुए । उसकी विलास-वैखरियोंका ही ध्यान करते-करते पागल बन उठे । उन्हीं विषयोंमें मग्न हो मनमें दुखी होते, इधर-उधर घूमते-घूमते, कुरु-देशमें, उन्होंने चञ्चल एवं सुन्दर चितवन वाली (उर्वशी) को देखा ॥२४॥

देखते ही उसकी आँखें अतुलित आनन्दसे ज्योतित हुई । चिरविरही जनोंके लिये अपने प्रियतमको देखनेके अतिरिक्त और सौभाग्य ही क्या हो सकता है ॥२५॥

उसे देख, निकट जाकर उमड़ते करुण रससे गद्गद स्वरसे वे बोले ॥२६॥

कभी तुमसे रुष्ट नहीं हुआ, कभी तुम्हारा बुरा (हानि-प्रद) नहीं किया । सदा तुम्हारे दासकी तरह रहा, कभी तुम्हारी बातको टाला नहीं । कोई बहाना बनाकर तुम्हारे कहे हुए कार्यको करनेसे नहीं रहा । हे कुरंग लोचनी ! फिर भी तुम मुझे छोड़ गई हो ! यह कहाँका न्याय है ॥२७॥

हे दुष्टे ! मुझसे घृणा करोगी तो इस शरीरको धारण नहीं कर सकूँगा । मेरे मनको जानकर भी इतनी कठोर बन रही हो ॥२८॥

मुझसे प्रेमकर मेरे पास आई ही क्यों ? मुझसे मिलकर इस प्रकार मुझे क्यों त्याग दिया ? मैं तो समझता रहा कि तुम्हारा प्रेम सत्य है । हे मनोहारिणी ! मुझे चिन्ताओंमें डुबो दोगी ॥२९॥

रमणि ! नी यार्लिंगनमु चोप्पडमिनाकु
 रात्रुलेल्लनु शिवरात्रुलाये,
 पूबोडि ! नीदु तांबूलमब्बमि नाकु
 दिनमुलेल्लनु हरिदिनमुलाये,
 तेरव ! नी केम्मोवि तेनेलब्बमि नाकु
 ऋतुवुलेल्लनु ग्रीष्म ऋतुवुलाये,
 कलिक्कि ! नीतो बोत्तुगलिगियुंडमि नाकु
 क्षणमुलेल्लनु गतक्षणमुलाये,
 ललन ! नी नेन्नगवु वेन्नेललकु जोक्कु
 भाग्यमब्बमि नाकेल्ल पक्षमुलुनु
 गृष्णपक्षम्मुलाये, नीरोति नोप्पु
 कालमेगति वेगितुने ? लतांगि ॥३०॥

अनिबहुविधमुल विलपिं
 च्चु नृपालोत्तमुनि गांचि सूनृतगति न
 व्वनितामणि यतनि विर
 क्तुनि जेसि मरल्चु तलपुतो निट्लनियेन् ॥३१॥

वेलयांड्रेक्कड ! गूर्मुलेक्कड ! दयाविश्वासभावम्मुले
 क्कड ! लोलो दलपोयनेरकिट्टु मौख्यं बूनगा जेल्लुने ?
 कललोनेननु वारकामिनुल सांगत्थंबु वांछितुरे ?
 कलडे सूश्रमु गट्टिनट्टि मगडोक्कडंच्चु मा जातिकिन् ॥३२॥

वनितलयेड जोरुलयेड
 जनपालुरु विश्वसिंपजनदट्टुगानन्
 ननु दलचि विचारिपक
 च्चनि राज्यंबेलुकोनुमु जननाथमणी ॥३३॥

हे रमणी ! तुम्हारे आलिंगनके अभावमें, सभी रात्रियाँ मेरे लिए शिवरात्रियाँ बन गईं। (जागरण करता रहा।) है कुसुम-शरीरे ! तुम्हारे हाथोंसे ताम्बूलके न मिलनेसे सभी दिन, हरि दिन (एकादशी) हुए। हे नारी ! तुम्हारे अधर-मधुके न मिलनेसे सभी ऋतुएँ ग्रीष्म ऋतु-सी हुईं। हे मनोहारिणी ! तुम्हारी संगतिके बिना मेरे लिए सभी क्षण विगतक्षण (सुख) हुए। हे विलासिनी ! तुम्हारी मृदु हास्य-चन्द्रिकाओंमें प्रसन्न बने रहनेके सौभाग्यके अभावमें सभी पखवारे कृष्णपक्ष ही बने।

हे लतांगी ! तुम्ही बोलो कि इस प्रकारके समयको मैं कैसे बिताऊँ ॥३०॥

ऐसे बहुविधसे विलाप करनेवाले नृपोत्तमको देख तत्त्व-बोध करते हुए, उसे विरक्त करनेकी इच्छासे उसने इस प्रकार कहा ॥३१॥

“कहाँकी वेश्या और कहाँका प्रेम ? उनमें दया-विश्वास के भाव ही कहाँ ? ऐसा न समझ, इस प्रकार मूर्खतापूर्ण आग्रह करना कहाँ तक ठीक है ? स्वप्नमें भी वेश्याओंकी संगतिको नहीं चाहना चाहिए। जातिको मंगलसूत्र बाँधनेवाला कहीं एक पति हो सकता है ?” ॥३२॥

राजाओंको स्त्रियों और चोरोंका विश्वास नहीं करना चाहिए। अतः मेरी चिन्ता छोड़कर, अपने राज्यके शासन भारको देख लो ॥३३॥

अनुचु नोप्पजेप्पि यरिगेनायूर्वशि
मनुजविभुडु दानि मरवलेक
वन्त जेंदे, नेतवाडेन वारकां
तलनु जेरदीयवलदु वलदु ॥३४॥

इस प्रकार समझाकर वह चली गई। पर नरनाथ उस उर्वशीको भूल न सकनेके कारण दुखी हुए। कितने ही बड़े क्योँ न हों, वेश्याओंको निकट नहीं आने देना चाहिए ॥३४॥

[देवी भागवतसे]

५. राजनीति

तनया ! धर्मम्मन बु
द्विनि निलुपन् वलयुनेपुडु द्विजवर्युल म
न्नन सेयवलयु ब्रजलन्
दनुजुलवले ब्रौववलयु नरनाथुनकुन ॥१॥

धनमु न्यायागतंबयितनरुटोकटि
यनृतमु गालुवेट्टमियुनु नमार्गं
गामि गाकुंट तपसुल नोमुटयुनु
बरमधर्मम्मुलियवि पार्थिवुनकु ॥२॥

इन्द्रियजयंबु, पूज्युल नेरुगुटयुनु,
मन्त्रगुप्तियु, जोरुल मदमडचुट,
शत्रुशेषंबु सैपमि, सचिवु नन्य
सक्तु जेर्पमि पतिकि यशस्करंबु ॥३॥

शत्रुमित्रुलकृत्यमुल् चारमुखमु
वलन नेरुगुटयुनु शुष्कवादिगामि
दुष्टसंगंबु दोलगुट यिष्टुलकुनु
बूज्यलकुनीगियुनु विधि भूपतुलकु ॥४॥

यागमुल नोनर्चुट मृग
यागति नतिरक्ति लेमि यंगनलंबु
द्योगमुल विश्वासिपमि
यागमविहितमुलु नृपतुलगुवारलकुनु ॥५॥

धृतमुन वानि नाडेडि नीतिरहितु
नंदु मद्यम्मुनंबु वारांगनाज
नम्मुनंबुनु वरचुगानम्मुनंबु
विमुखुडै प्रज नट्लोनरिपवलयु ॥६॥

५. राजनीति

हे पुत्र ! राजाको सदा धर्मरत रहना चाहिए । ब्राह्मण-श्रेष्ठोंका आदर करते हुए, प्रजाका सन्तानके समान लालन-पालन करना चाहिए ॥१॥

पृथ्वीपतिके लिए, सम्पत्तिका न्यायसे कमाया जाना, अनृतसे दूर रहना, कुमार्गगामी न होना और तपस्वियोंकी रक्षा करना, ये परम धर्म हैं ॥२॥

इन्द्रिय-दमन, पूज्य पुरुषोंका ज्ञान, मन्त्रका गुप्त रखना, चोरोंके मदका दमन करना, शत्रुशेषको न रखना, अन्यासक्त मन्त्रीको स्थान न देना, ये काम नृपतिके लिए यशस्कर हैं ॥३॥

शत्रु और मित्रोंके कार्योंको गुप्तचरोंके मुखसे जानना, शुष्कवादी न होना (व्यर्थकी बातें न करना), दुष्टोंकी संगतिसे दूर रहना, इष्ट जनों और पूज्योंके प्रति दानशीलता, ये राजाओंके कर्तव्य हैं ॥४॥

यज्ञ-याग करना, शिकार खेलनेमें अति आसक्तिका न होना, स्त्री-जनोंका राजकाजमें विश्वास न रखना, राजाओंके लिए ये आगमविहित धर्म हैं ॥५॥

जुएँसे, जुआ खेलनेवाले नीतिरहित जनोंसे, मद्यसे, वेश्याओंसे, संगीतसे प्रायः स्वयं विमुख हो प्रजाको भी विमुख रखना चाहिए ॥६॥

अरसि ब्रह्ममुहूर्तमुनन्दु लेचि
स्नानमोर्नरिचि नियतुडै शक्ति पूज
भक्ति नोर्नरिपगावले प्रतिदिनम्मु
जन्मसाफल्यमुनु गोरु चतुरमतिकि ॥७॥

ओकसारियैन नप्पर
मकृपानिधि नंब गोलिचि मन्नन दत्प
दकमल जलंबु गोलिन,
सुकृतिकि जन्मम्मु लेदु सू निक्कमुगन् ॥८॥

दृश्यमगु जगमखिलम्मु देवदेवि
जीवुडीश्वरुडुनु गूड देवदेवि
यनि विनिश्चितात्मुंडगु ननघमतिकि
नतुलितानन्दमेल्लप्पुडुनु घटिंचु ॥९॥

प्रातः कृत्यमुलन् यथोचितगतिं बार्तिचि कोल्वुंडि वि
द्यातंत्रज्जुल विप्रुलन् बिलिचि शास्त्रार्थम्मुल व्वारिचि
बूतुंडै विनि पात्रुलै तनरु ना भूदेवता श्रेष्ठुलन्
श्रीतिन् दानमुलिच्चि पुच्चवलयुन् बृथ्वीशुडेल्लप्पुडुन् ॥१०॥

विनु मूर्खुलैन द्विजुलकु
धनमीवल दिच्चेनेनुदर पोषणकुं
गनिपेट्टि यीवल्युं लं
धनमोर्नरिपंगदगदुगा धर्ममुलन् ॥११॥

अनघुलभूमिदेवतल नत्यमलात्मुल नेन्नडेनियुन्
जनदवमानमुं गोलुप क्षत्रकुलम्मुन कम्महामहुल्
जनकुल ; वारि यगिनकिनि, क्षत्रिय जातिकि विप्रजाति लो
हनिधुलकुन् शिलल् जनकतास्पदमुल् विधिचोदितम्मुगन् ॥१२॥

जन्मकी सफलता चाहनेवाले चतुरमति राजाको ब्राह्म मुहूर्तके समयमें जागकर, स्नानकर, नियत हो, नित्य ही, भक्तिके साथ शक्तिकी पूजा करनी चाहिए ॥७॥

दिनमें एक बार तो उस परम कृपानिधि माताकी अर्चना कर, उसके पदकमलोंके जलको पीनेवाले सुकृतिको वास्तवमें पुनर्जन्म नहीं है ॥८॥

अखिल दृश्य जगत्को, जीव और ईश्वरको भी देव-देवीमय समझनेवाले विनिश्चतात्मा पुण्यात्माको सदा ही अतुलित आनन्द प्राप्त होता है ॥९॥

पृथ्वीपतिको यथारूप प्रातः—कृत्योंसे निवृत्त होकर, सभाका आयोजन कर, विद्यातन्त्रज्ञ विप्रोंको बुला, उनके शास्त्रार्थोंको सुन पवित्र हो, योग्य ब्राह्मणोंको सप्रेम दानादि देकर तृप्त करते रहना चाहिए ॥१०॥

इस बातपर ध्यान दो कि मूर्ख ब्राह्मणोंको धन मत देना । अगर दिया ही तो पेटभरने मात्रके लिए देना चाहिए, क्योंकि धर्मका उल्लंघन नहीं करना चाहिए ॥११॥

अनघ और अति अमल आत्मावाले भू-देवताओंका कभी अपमान नहीं करना चाहिए । वे महिमामय ब्राह्मण क्षत्रिय कुलके जन्मदाता हैं । विधाताकी रचनाके अनुसार पानी आगका, विप्र जाति क्षत्रिय जातिका, शिलाएँ लोहेकी खानकी जन्मदात्री हैं ॥१२॥

वारलतेजमेंदुनु नवारितमै यलरारु भूपतुल्
 वारललोन धीरुलगु वारल नेन्नियखंडवान स
 त्कारमुलन् महाविनय गौरवसंपदलन् महोन्नति
 गोरुचु बूज सेयुदुरकुंठित वैभवमुल् सेलंगगन् ॥१३॥

धर्मशास्त्रानुसरणंबु दप्पकेपुडु
 दंडनीति यवश्यंबु धरणिपतिकि
 गोश संग्रहमेल्लेड गूर्पवल्यु
 ननुचु बोधिचे बृथिर्वीद्रुडात्मजुनकु ॥१४॥

[देवी भागवतः उत्तरार्धसे]

उनका तेज सर्वत्र अवारित हो शोभित होता है। अकुण्ठित वैभवयुक्त और महोन्नत होनेके लिए राजाओंको चाहिए कि अखण्ड दान सत्कार, महाविनय गौरवके साथ उनकी पूजा करें ॥१३॥

धर्मशास्त्रके अनुसार धरणीपतिको सदा दण्डनीतिका पालन करना आवश्यक है। सदा सर्वत्र कोश-संग्रह करना चाहिए। इस प्रकार राजाने अपने पुत्रको राजनीतिका उपदेश दिया ॥१४॥

[देवी भागवत: उत्तरार्द्धसे]:

३. रवीन्द्रनाथ ठाकुर

सर्वद्वीप वतंस चारुकवितामल्लीप्रसून सृजे
 वागीशाय रवीन्द्रनाथकवये कुर्मशुभाशंसनम् ।
 हेला निर्मितयाऽपिकाव्य सुधया भाषान्तरी भूतयाऽ
 प्यामोदम् वितनोति यस्सुमनसाम् सर्वप्रपंचेऽधुना ॥१ श्लो.॥

ठाकरुवंशांबुधि पूर्णचन्द्रो
 देवेंद्रनाथस्य सुतो महर्षेः
 बंगाळहूणामरदेशभाषा
 निधिः पुरोभाति रवीन्द्रनाथः ॥२ श्लो.॥

खंडे खंडे नगर्यामपिच जनपदे देशभाषास्वनूक्तम्
 पुण्यादेकाग्रचित्ताः पुलकित वपुषो यस्य काव्यं पठंति
 वाग्देवीयस्य वाचिक्षिपति मधुझरीं शीतलां भूतधात्री
 सर्वेषामक्षियुग्मं सपदिवितनुता मातिधेयं रवींद्रः ॥३ श्लो.॥

६. रवीन्द्रनाथ ठाकुर

[सन् १९२० में जब विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ' काकिनाडा ' में पधारे थे, तब उनके स्वागतमें कहे गए पद्य ।]

सभी देशोंमें श्रेष्ठ, सुन्दर कविता प्रसूनोंकी सृष्टि करनेवाले, गिराके ऐसे प्रभु रवीन्द्रनाथ कविकी हम लोग शुभ कामना करते हैं, जो अनायास रची गई अपनी कविता सुधाका, अनुवादके रूपमें भी, आधुनिक संसारके विद्वानोंको अतीव आनन्द प्रदान करते हैं ॥१॥

ठाकुर वशाम्बुधिके पूर्णचन्द्र, महर्षि देवेन्द्रनाथके पुत्र, बंगला, हूण (अँग्रेजी), अमर (संस्कृत) भाषाओंके विद्वान रवीन्द्र हमारे सामने विराजमान हैं ॥२॥

जिसके काव्यको अपनी-अपनी भाषाओंमें, पुण्यके कारण प्राप्त एकाग्रतासे पढ़कर, देश-देशोंके नगरोंकी ही नहीं, ग्रामीण जनता भी पुलकित होती है । जिसकी गिराओंमें जगत्की रक्षा करनेवाली माता वाग्देवी शीतल मधुको प्रवाहित करती है, वे रवीन्द्र हमारी आँखोंमें समाकर हमारे आदरके पात्र बनें अर्थात् उनके दर्शन पाते रहकर हम अपनेको कृतार्थ करें ॥३॥

अखिलदेश समुच्चयंभेन बहुमति
 गणायिचे ने सूरि कौशलंबु,
 रसवत्कथानक प्रसरणाविर्भूति
 काल्पिचे ने कवि कल्पनंबु,
 भरतखंडमु कविप्रभु जन्मखनि यन्न
 ल्याति स्थापिचे ने धन्युनि पेरे,
 सर्वं विद्यासागर चत्वरम्मूलयंदु
 दांडवं बाडे ने धन्यु कीर्ति,
 सुकविता शक्ति नट्टि भासुरगुणुंड
 वरुगुदेंचितिवय्य ! मा पुरिकि गाकि
 नाड कीनाटिकि रवींद्रनाथ सुकवि
 सार्वभौम ! यिदे नीकु स्वागतंबु ॥४॥

वंगराष्ट्रमु गर्वपडुनट्टुलु महर्षि
 देवेंद्रनाथु बुत्रीकरिचे,
 भारतीयुलु तुष्टिपडग ' नोबिलु प्रैजु '
 गैकोने सरसमौ कवनमंदु,
 सर्वानुभवनीय संगतुल् चोनुपुचु
 वषिचे बेक्कु काव्यमुलु जगति,
 नन्यखंडमुलु ब्रह्मैक्यम्मु विवरिचु
 गीतांजलि रचिचि गीति वडसे,
 ज्ञानमुनयंदे काक येइवर्यमंदु
 सैतमु रंहिचे भाग्य विस्फीति मेरय
 नवसुधामूर्तिकि रवींद्रनाथु कीर्ति
 कभ्युदय मब्बुगात निरंतरंबु ॥५॥

अखिल देशोंमें समुन्नत पुरस्कारको सूरिके बुद्धि-कौशल ने प्राप्त किया, रसवत्-कथानक-प्रसरण जिस कविकी कल्पनाकी चतुराईने किया, इस महनीयके नामके 'भारत देशके कवि प्रभु-जन्म खनि' की ख्यातिसे प्रतिष्ठित किया ? सर्व विद्यागार-प्रांगणोंमें जिस धन्य-पुरुषकी कीर्ति परिव्याप्त हुई ? सुकविता शक्तिमें ऐसे भासुर-गुणयुक्त तुम हमारे नगर काकिनाडा में आज आए । हे रवीन्द्रनाथ ! हे सुकवि सार्वभौम !! यहाँ तुम्हारा स्वागत है ॥४॥

वंग देशके गौरवके रूपमें महर्षि देवेन्द्रनाथके यहाँ उत्पन्न हुए, भारतीयोंकी सन्तृप्तिके रूपमें, सरस कविताके लिए, 'नोबल प्राइज' प्राप्त किया, सर्वानुभवनीय विषयोंका वर्णन करके कई काव्योंसे जगत्को आप्लावित किया तथा ब्रह्मैक्य (वेदान्त) के विवरण रूप 'गीताञ्जलि' की रचनाकर अन्य देशोंमें भी कीर्ति पाई । ज्ञानमें ही नहीं, ऐश्वर्यमें भी बड़प्पन पाया । ऐसे नव सुधामूर्ति रवीन्द्रकी कीर्तिको सदा ही अभ्युदय प्राप्त हो ॥५॥

७. विवेकानन्द स्वामी

पुट्टेनेव्वडु हिव्वुल्लोन गायस्थ
 जातिलो वंगदेशम्मनुंदु,
 च्चदिवे नेव्वंडोक्क संस्कृतंबेकाक
 यिंगलीषु मोदलेन्नियेनिभाष,
 लरसे नेव्वाडोक्क यद्वैतम्मे काक
 भूमिलोगल मतमुलवियेल्ल
 दिरिगे नेव्वाडात्मदेशमोक्कटे काक
 यखिलम्मुलगुविषयमुलेल्ल,
 निहमुनंगल्लु तुच्छमौनिच्चविडिच्चि
 बाल्यमादिग परमुकै पाट्टु वडुट
 तक्क नेव्वाडेरुंगडितरमु सुन्त
 आतडु विवेकयोगि दिव्यपदभोगि ॥१॥

एवनिकि शक्यमौ ? मतमुलेल्ल विचारणसेयुनट्टि ह
 णवरुलदेशमंदुन घनंबगुनट्टि सभास्थलम्मनुं
 'बवनिनि गल्लु मी मतमुल्लनियुलेत' लटंचु खंडनं
 बु वोनरुपन्, स्वकीयमतमुन्निलुपंग, विवेकुदक्किकनन् ॥२॥

शंकरादुल विजयंबु सल्लुपुट्टेल्ल
 नात्तराज्यम्मनुंद, वीरट्टु गाक
 यन्यदेशम्मल्लुकु नेगि यन्यमतमु
 वारिनद्वैतुल्लुग जेयु धीरवरुल्लु ॥३॥

इहमुनुकु दक्क बरमुनकिच्चुकेनि
 स्वप्नमुननेन यत्नम्मु सल्लुपनट्टि
 हूणुल्लनु बेलकोलदि दानुद्धरिच्चि
 ज्ञानुल्लनु जेसे नी विवेक प्रभुंडु ॥४॥

७. विवेकानन्दकी प्रशंसामें

जो हिन्दुओंमें, कायस्थ जातिमें, वंग देशमें पैदा हुआ, जिसने संस्कृत ही नहीं, अँग्रेजी आदि कई भाषाएँ पढ़ीं, अद्वैत ही नहीं संसारके सभी धर्मोंका अध्ययन किया, अपने देशके अतिरिक्त अन्य देशोंमें भी भ्रमण किया, बाल्यकालसे ही ऐहिक तुच्छ इच्छाओंको छोड़, परलोक सुधारनेके सिवा और कुछ जाना ही नहीं था, वह दिव्यपद भोगी विवेकयोगीके अतिरिक्त और कौन हो सकता है? ॥१॥

विवेकानन्दके सिवा और किसकी सामर्थ्य है जो सभी धर्मोंपर विचार करनेवाले पाश्चात्य देशके (अमेरिकाके) महान् सभास्थलपर खड़े होकर संसारको यह कह सके कि इन सभीके धर्म कच्चे हैं। अपने धर्मकी कीर्ति (प्रशस्ति) स्थापित करना भी उसीका काम है ॥२॥

शंकराचार्य आदि महापुरुषोंने तो अपने ही देशमें अपनी विजयकी घोषणा की। पर ये ऐसे नहीं हैं। अन्य देशोंमें, अन्य धर्मावलम्बियोंको अद्वैत बनानेवाले धीर पुरुष हैं ये ॥३॥

इस विवेक प्रभुने ऐहिक विषयोंको छोड़ स्वप्नमें भी पारलौकिक चिन्तन न करनेवाले हजारों हूणों (पाश्चात्यों) का उद्धार कर उन्हें ज्ञानी बनाया ॥४॥

मीसाल् वच्चिन बालुलार ! यनि यम्मे प्यासु गार्विच्चि बल्
वार्सि बोल्चेडिवारि बिल्चि सभलो वादम्मु लेके युप
न्यासंबिच्चि 'मतम्मनंग नोक यद्वैतंब' यंचुन् दगन्
वा सिद्धांतमु सेयु धन्युडतडेत्तन्मात्रुडे चूडगन् ॥५॥

एम. ए. उपाधि प्राप्त प्रसिद्ध व्यक्तियोंको भी 'मसोंवाले बालको!' कहकर सम्बोधन करते और सभामें बिना किसी वाद-विवादके ही—आसानीसे—'धर्म है तो बस एक अद्वैत ही' कहकर सिद्धान्तका प्रतिपादन करनेवाले धन्य पुरुष सामान्य हैं ! ॥५॥

८. काव्य-लक्षण

अट्टि कवनम्मु दन कब्बदनेडि दुःख
 मुन गुकवि सुकवि कवित गनि हसिच्चु
 नंदमगु भायंलेनिवाडन्य सुन्द
 रीमणिनि गांचि नगिनंत नेमिपोवु ? ॥१॥

अतिसरसमुलति कठिनमु
 लितरमुलगु पद्यमुलुनु गृतिततुलंदा
 रतुकुट दोसमे नाना
 गति विधिकृत सृष्टि यंद कनबडुनु गदा ! ॥२॥

मृदुलमगु गाक कठिन मै येसगु गाक
 सरसमगु पद्यमु मुदंबोसंगु मविकि
 रसिकुडगुवानि कोक यधरंबे मोद
 मिडुने, कुचयुगमदि मोदमिडक युप्पे ? ॥३॥

पेक्कु गुणमुलचे वप्पेकेक्कु कृतुल
 नल्पदोषंबु विट्ठांसुलरयबोरु
 द्राक्षदिनु नेर्पु गल्लिन रसिकुडैन
 नुमसि वेयुने तट्टीजमोक्कडैन ? ॥४॥

सरसकवित्व तत्व गतिसारविदुल् दललूचि मेच्चु मा
 घुरि नेरिमीरु सत्कविततोय्यलुलेल्ल शिरंबुलंदु ना
 वरमुन दाल्चु मालिक वृथागति गोतुलचेतबड्ड य
 द्दलरसिकुलैन दुमंतुलयप्रमुनन् नट्टियपकुंडुत्तन् ॥५॥

८. काव्यका स्वरूप

वैसी (उत्तम) कविता मुझसे न बन पाएगी, इस बातका मनमें रंज होनेके कारण, कुकवि हमेशा सुकविकी निन्दा करता है, उसका परिहास करता है। वह व्यक्ति जिसकी पत्नी सुन्दर नहीं है, यदि दूसरी सुन्दरी स्त्रीको देखकर हँसे तो क्या होगा ? ॥१॥

अति सरल, अति कठिन और न सरल, न कठिन ऐसे पद्योंका कृति समूहोंमें प्रयोग करनेमें दोष कहाँ है ? ब्रह्माकी सृष्टिमें नाना प्रकारका वैविध्य क्या दृष्टिगोचर नहीं होता ? ॥२॥

मृदुल हो (सरल शब्दोंसे युक्त) या अति कठिन हो, जो कविता सरस होगी, वह मनको प्रसन्न करेगा हा। रासक जनको अधर ही नहीं कुचयुग्म भी प्रसूदित करते हैं ॥३॥

कई गुणोंसे युक्त सुन्दर कृतियोंके अल्पदोषोंकी ओर, विद्वज्जन ध्यान नहीं देते। दाख खा सकनेवाला रसिक क्या उसके बीजको थूक देगा ? ॥४॥

सरस कवित्त-तत्त्वकी गतिको जाननेवालोंसे प्रशंसित माधुर्यसे सम्पन्न कविता, सुन्दरियोंके वेणी भारपर विलसित पुष्पमालाके समान है। यदि वह अरसिक और दुर्मतियोंके पल्ले पड़े तो मानों, बन्दरोंके हाथ पड़ी पुष्प मालाकी तरह व्यर्थ बनेगी। भगवान करे कि सत्कविताकी ऐसी दुर्गति न हो ॥५॥

चिन्निवन्नेलाडि चिन्नारि पोन्नारि
 गंटलोलयु कांचिकारवम्मु
 पगिवि सुकविकवित पंडित हृदयमुल्
 विनिनयंत मात्रमुन गरंचु ॥६॥

अप्रयत्नोक्तमैनवि यय्यु सुकवि
 कवित पंडित हृदयमुल् गरगजेयु
 सहज लावण्यनिधियेन चान नगलु
 दाल्पकुन्न नोयारंबु तक्कुवौने ? ॥७॥

तनकु नालु निघंटु पदमुलु वच्चु
 ननुचु बदिमंदिकिनि देलियंग मारु
 मूल पदमुलु गुप्पिन मुच्चटगुने ?
 प्रति पदम्मुन रसमुट्टिपडिन गाक ॥८॥

कवितयु वनितयु दनयं
 त वलचिवच्चिन मुदंबोदव जेयुनु; म
 ककुदलेक बलात्कारं
 पुविधम्मुन वच्चिनदिय पो ! दुःखमिडुन् ॥९॥

छबीली विलासिनीकी नूपुर ध्वनिके समान ही सुकविता कानोंमें पड़ते ही पण्डितोंके हृदयोंको मुग्ध कर देती है ॥६॥

सहज रूपमें उक्त हो कर (सहज और स्वाभाविक रूपसे कही गई) भी सुकविता पण्डितोंके हृदयोंको मुग्ध करती है। सहज लावण्ययुक्त युवती यदि भूषण धारण न करे तो उसके सौन्दर्यमें क्या कोई कमी होगी? ॥७॥

मुझे दस पाँच कोशगत शब्दोंका ज्ञान है, इस बातका परिचय देते हुए अप्रयुक्त शब्दोंका प्रयोग करनेसे कविता सुन्दर बनती है? उसमें प्रति शब्दका रस भी भरा होना चाहिए ॥८॥

यदि कविता और वनिता स्वयं प्रेमसे आँ तो आनन्द देती हैं। बिना प्रेमके जबरदस्ती आँ तो दुःख ही देती हैं ॥९॥

९. नाना राजसन्दर्शनम्

परदेश संपादनरति मीकु नरेंद्र !
 परदेश संपादनरति माकु,
 लसदुत्तम पदाभिलाषमीकु नरेंद्र !
 लसदुत्तम पदाभिलाष माकु,
 सकलनुत्य श्लोक सक्ति मीकु
 सकलनुत्य श्लोक सक्ति माकु,
 मनुमार्ग वर्तनंबनुवु मीकु नरेंद्र
 मनुमार्ग वर्तनंबनुवु माकु,
 मीकु राजपदमु माकुनु गविराज
 पदमु कलदिकेदु गोदव लेदु
 गान साम्यमिच्छि मानिचुटोप्पदे ?
 मुद्दु कृष्ण याच भूवरेष्य ! ॥१॥

कठिनम्मलुगु राल्लु करपिकट्टिन
 रामभजनालयम्मले पडककाये,
 दाकिन मात्रान दनुवु करंग जेय,
 जालिन चलिनीटि स्नानमाये,
 नुडिकियुनुडुकनि कडु वेडि मेलुकुले
 याकोन्न कडुपु कड्डमाये,
 ब्रभुविच्चे वेनूट पदियारलनुनट्टि
 स्वप्नम्मले धनार्जनमुलाये,
 वीनिनन्निटि गोपालविभुडु दीर्चे
 मरल नीलाटिकण्टमुल् माकु वूर
 तरमुलै युंड जेयु मित्तरिनि गीति
 सान्द्र ! श्रीमुद्दु कृष्ण याचेंद्र भूप ! ॥२॥

९. नाना राजसन्दर्शनसे

[एक बार कवि जब नेल्लूरुके जमींदारके पास गए थे तब उन्होंने इस प्रकारका विनय-पत्र लिख भेजा था।]

हे राजन्! परदेशोंके सम्पादन (जीतने) की रति (आसक्ति) आपको है तो हमें परदेशोंमें सम्पादन (कमाने) की। उत्तम स्थानोंकी अभिलाषा आपको है तो हमें उत्तम शब्दोंकी। सबसे प्रशंसित कीर्तिकी इच्छा आपको है तो हमें सबकी प्रशंसाके पात्र श्लोकोंकी। मनु महाराज द्वारा निर्धारित मार्गपर चलना (नियमोंके अनुसार कार्य करना) आपको उचित है तो जीवन-निर्वाहकी पद्धतिकी अनुकरण करना हमारे लिए। आपको राजपद है तो हमें कविराज-पद है। फिर अन्तर किसी बातमें नहीं है। अतः हे मुद्दुकृष्ण याचभूवरेण्या! समानताका गौरव देकर, सत्कृत करना समुचित है न! ॥१॥

कठिनतर पत्थर बिछाकर बचाए रामभक्तिका (पथरीला) फर्श ही हमारे लिए बिस्तर बन गया। स्पर्श-मात्रसे शरीरको थका देनेवाले ठण्डे पानीमें स्नान करना और कच्चे-पक्के गरम-गरम भातसे ही भूखे पेटको भरना पड़ रहा है। 'प्रभुने १११६ रुपए* ही दिए, ये ही स्वप्न धनार्जनके साधन बने। इन सब कष्टोंको प्रभु गोपालने दूर किया और ऐसे कष्टोंका सामना करना न पड़े, ऐसा कर दो न हे कीर्ति-सान्द्र! हे मुद्दुकृष्ण याचेन्द्र भूपति!! ॥२॥

* आन्ध्र प्रदेशमें पुरस्कार देते समय ११६, १११६ या ५८, २९ रुपयोंकी रकम देनेका रिवाज है।

परदेशमुलु दिव्यतरदेशमुलगाग
 बरुल ग्राममुलु कापुरमु गाग,
 बरगेहमुलु सौख्यकर गेहमुलु गाग
 बरुल यन्नमु बुष्टिकरमु गाग
 बरसज्जनावळुलु परम बन्धुल गाग
 बरुलसंपदलु संपदलु गाग,
 बरुल कष्टसुखम्मुलरयुवारलु गाग
 बरुलेल्ल गार्यतत्परुलु गाग,
 जेसि पुट्टिचिनट्टि जेजेल पेद्द
 पंडितप्रीति नोप्पुमीवंटि नृपति
 मणुल कोंदर सृर्जायिप मरचिपोये
 नेमनन्दुमु? मद्दु कृष्णेन्द्र! विधिनि! ॥३॥

ए राजु कविराजु नेनुंगु नेक्कच्चि
 यूरेगेजेसे नी यूरियन्दु,
 ने राजु कविराजु चे राजित शता
 वधानम्मु च्चैयिचि पूने गीर्ति,
 ने राजु वेदान्त सार बोधक सुप्र
 बन्धमुल् रर्चायिचि वन्ने केक्के,
 ने राजु 'सर्वविद्याराज' टंचुनु ग
 वुलचे सन्नति गांचि मिचे,
 नट्टि विद्वत्कुमार भूपाग्रगण्य
 पूर्वकृतपुण्यराशि! यो मुद्द कृष्ण!
 स्वागतंबुग दर्शनंबीगदय्य!
 घनत बिरुपति थैकट कवुलकिपुडु ॥४॥

परदेश ही हमारे लिए दिव्यतर देश बने, पराये ग्राम ही निवास-स्थान बने। परगृह ही सुखदायी घर बने और पराया भोजन ही पुष्टिकर बना। पराये सज्जन ही परम बान्धव बने, परायी सम्पत्ति ही सम्पत्ति बनी। पराये जन ही सुख-दुखमें हमारी देख-रेख करनेवाले और हमारे कार्योंमें तत्पर बने। इस प्रकार हम जैसे जनोंकी सृष्टि करनेवाला वह चतुरानन हाय! पण्डितोंपर प्रेम रखनेवाले आप जैसे राज श्रेष्ठोंकी सृष्टि करना भूल गया। क्या कहें उस विधाताको हे मुद्दुकृष्णेन्द्र ! ॥३॥

जिस राजाने इस नगरमें कविराजको करिराजपर बैठाकर जुलूस निकलवाया, जिस राजाने कविराजसे शतावधान करवाकर प्रसिद्ध पाई, जो राजा वेदान्तसार बोध करानेवाले प्रबन्धोंकी रचना कर प्रसिद्ध हुआ, जो राजा 'सर्व विद्याराज' कहलाकर कवियोंसे प्रशंसित हुआ, ऐसे विद्वान् कुमार-भूपति श्रेष्ठकी पूर्वपुण्य राशि बने हे मुद्दुकृष्ण! स्वागत सहित इन तिरुपति-वेंकट कविको अब दर्शन दो न ! ॥४॥

श्रीनाथमुख कविश्रीनाथु लेवंश
 संस्थानमंडु नास्थानकबुलु,
 रायवेश्या भुजंगायित सिंगभू
 पालुडेवंश संपत्करंडु;
 खड्गनारायण ख्याति गांचिन
 पोतभूपालुडेवंश भूषणंबु,
 मरियु नेंतयु महामहुलै चेलंगिन
 राजन्युलेवंशराजिमणुलु,
 अट्टि वेलुगोटि वंश भूपाग्रगण्य
 पूर्वकृत पुण्यराशि ! यो मुद्दुकृष्ण !
 स्वागतंबुग दर्शनंबीगदय्य
 घनत दिरुपति वेंकट कबुलकिपुडु ॥५॥

देवर याज्ञ गैकोनक तेंपुन नेल्लुरि पट्टणम्मु मुन्
 बोवुट मंचिगा दयिन बोवुट केमि निमित्त मन्ननो
 भूवर ! शुद्ध वैदिकुल बुद्धिमहत्व पटुत्व संपदल्
 देवर वारि चित्तफणितिन् जोरवारि मुदम्मुसेयगन् ॥६॥

एच्चटनुंडेनीनगर ! मेच्चट माधवळेइवरंबहो !
 यिच्चटिः केगुदेंचुनेड नेंदरु मध्य गलारु राजु ! ले
 मच्चटि केगकिच्चटिकि वच्चुग वच्चुट किच्च चूड नी
 सच्चरितंबकाक नृपसत्तम ! वेरोक हेतुवुन्नदे ? ॥७॥

एच्चट गोदावरि ! मरि
 येच्चट नी वेंकटगिरि ! यितवरकु नी
 सच्चरितमु विनिकादे
 वच्चितिमि नृपाल ! सुकविपंडितपाला ! ॥८॥

ई रेलुबंडि पोगचे
 वारिनि दोरकोन्नयट्टि तापमु नीस
 त्कारुष्यामृत शीतल
 धारल बो नडपवल्यु धरणीपाला ! ॥९॥

‘श्रीनाथ’ प्रमुख कवि ‘श्रीनाथ’ जिस राजवंशकी सभाके राजकवि थे, सामन्त नृपरूपी वेश्याओंको आश्रय देनेवाले रसिक प्रवर सिंगभूपाल जिस वंशके सम्पत्कार थे, ‘खड्ग नारायण’ की ख्याति पानेवाले पोत भूपाल जिस वंशके भूषण थे, इनके अतिरिक्त अनेक महान् सुप्रसिद्ध राजा लोग जिस राजवंशकी शोभा बढ़ानेवाले थे, ऐसे ‘वेलुगोटि’ वंशके भूपति श्रेष्ठोंके पूर्वपुण्य राशिभूत हे मुद्दुकृष्ण! स्वागत सहित अब इन तिरुपति-वेंकट कवियोंको दर्शन दो न ! ॥५॥

बिना आपकी अनुमतिके ‘नेल्लूर’ नगर जाना ठीक नहीं है। फिर जानेका कारण जानना चाहें, तो हे राजन् ! शुद्ध वैदिकोंके बुद्धि-महत्व और पटुताकी सम्पत्तिको आप जान लें और प्रसन्न हों ॥६॥

कहाँका यह नगर और कहाँ हमारा धवलेश्वर ? यहाँ तक आते समय मध्यदेशमें और कितने ही राजा हैं। उनके पास न जाकर सीधे तुम्हारे पास आनेकी इच्छा करनेका कारण तुम्हारे सच्चरित्रके सिवा और क्या हो सकता है ? ॥७॥

कहाँकी गोदावरी और कहाँका यह वेंकटगिरि ? हे सुकवि-पण्डित-पोषक ! हे राजन् !! तुम्हारे सच्चरित्रकी बात सुनकर ही तो इतनी दूर आए हैं ॥८॥

हे धरणीपाल ! इस रेलके धुँके कारण मार्गमें उत्पन्न तापको, अपनी सत् कारुण्यामृतकी शीतल धाराओंसे दूर कर देना तुम्हारा काम है ॥९॥

कवुलवलन ब्रभुवुलकु ब्र
भुवुल वलन गवुलकिलनु भूरियशमु सं
भवमंदु गान गवुल ब्र
भुवुलत्यावरमु तोड बूजिन्नु नृपा ! ॥१०॥

ई विषयंबंतयु दम
के विशदमु वेरे चेप्पनेल ? ययिन नी
मा वैदिक चादस्तं
बीविधमुन त्रायजेसे निपुडु नृपाला ! ॥११॥

कवियोंसे प्रभुओंको और प्रभुओंसे कवियोंको भूरि यश सम्प्राप्त होता है। अतः हे राजन्! प्रभुजन, कवियोंकी अत्यादरसे पूजा करते हैं ॥१०॥

ये सब बातें तो आपको ज्ञात ही हैं। अतः उन्हें बार-बार क्यों कहें? पर हे राजन्! हमारी वैदिकी छान्दसी प्रवृत्तिने हमसे इतना लिखवाया ॥११॥

१०. नाम साम्यम्

कासुचोप्पुन नितगा नार्जनमु चेसि
 तैतदेच्चिननु माकिन्तलेदु,
 गडगडलाडि निन् गानंग नेतैत्रु,
 गान बोयिनमम्मु गांचुटरिदि,
 प्रीतितो नीकु नपितु रैतैन
 माकिन्तयिच्चि नेतुरैतोयनुचु,
 सेविच्चि नीकु वांछितमुलित्तुरु
 सेव काविच्चिननु माकु गामुनीरु,
 वेयिमाटलफलमेमि ? पेरुलोकक
 टैननु नदृष्टमुलु वेरुलै चेलुंगु
 सरसतिरुपति वेंकटेश्वर कवींद्र
 शरण ! तिरुपति वेंकटेश्वर ! नमोऽस्तु ॥१॥

आसिचेदेलोको कासुलार्जिपग
 शुद्धवारिद्र्च विस्फूर्ति तनर,
 लक्षिचेदेलोको लंचमिच्चिनवारि
 बक्षपातिविधम्मु बयलु पडग,
 हिसिचेदेलोको ऋणमिच्चि नृपकोटि
 बेदुकोमटिसेट्टिविधमु दोप,
 वर्सियिचेदेलोको पर्वताग्रम्मु पै
 बेटलाडेडि बोयसाटि देलिय,
 नाकु निवियन्नियुनु नरुवु नडकलंचु
 दोचु नीचित्तमुन केमि दोचु नोक्को ?
 सरसतिरुपतिवेंकटेश्वर कवींद्र
 शरण ! तिरुपति वेंकटेश्वर ! नमोऽस्तु ॥२॥

१०. नाम-साम्य

एक-एक पैसे (अशर्फी) के हिसाबसे इतना कमा चुके हो तुम, पर जितना भी कमा लाएँ, हमारे हाथमें एक पैसा भी नहीं है। लोग थर-थर काँपते हुए, तुम्हारे दर्शनोंको आते हैं, पर हम किन्हींके दर्शनके लिए जाते हैं तो बिरलेके ही दर्शन मिलते हैं। तुम्हें तो जितना भी हो, सब सप्रेम समर्पित करते हैं। पर हमें थोड़ा देकर भी बहुत मानते हैं। तुम्हारी सेवा कर तुम्हारी अभीष्ट वस्तुएँ तुम्हें देते हैं, सेवा करनेपर भी हमें एक पैसा तक नहीं देते हैं। बहुत अधिक बातें कहनेमें क्या सार है? नाम एक होनेपर भी अदृष्ट तो अलग-अलग हैं। सरस तिरुपति-वेंकटेश्वर कवीन्द्रोंको शरण देनेवाले हे तिरुपति वेंकटेश्वर! तुम्हें नमस्कार है!! ॥१॥

शुद्ध दारिद्र्यकी विस्फूर्तिके शोभाग्रमण होनेपर भी, पैसे क्यों कमाना चाहते हो? रिक्त देनेवालोंसार, अधिक ध्यान क्यों देते हो जिससे तुम्हारे पक्षपातका विधान प्रकट हो? ऋण देकर राजाओंको क्यों सताते हो, जिससे महावैश्यक गुण दिखाई दें? शिकार खेलनेवाले किरातके समान होकर, पर्वत शिखरपर क्यों रहते हो? मुझे तो ये सब परिहासकी बातें लगती हैं। सरस तिरुपति-वेंकटेश्वर कवीन्द्रोंको शरण देनेवाले हे तिरुपति वेंकटेश्वर! तुम्हें नमस्कार है!! ॥२॥

११. समस्या-पूर्ति

‘गानमुवंटि विद्यनिकगानमु ।’

ज्ञानविहीनुलं वनुपु, ज्ञानुलवन्युनु, रागशून्युलौ
मौनुल वन्यु, प्रूरफणिमंडलि वन्युनु, सर्वपक्षिसं
तानमु वन्यु, गुरलनु वन्यु, मृगम्मूल वन्यु, नेत्र नी
गानमुवंटि विद्य निक गानमु वेंकटकृष्णभूवरा ! ॥१॥

‘रागमुल्लोन मेघमल्लारनंग ।’

श्रेष्ठमुलु मूडु वेंकट कृष्णभूप !
नागमुल्लोन नैरावणं बनंग
योगमुल्लोन लंबिका योगमनग
रागमुल्लोन मेघमल्लारनंग ॥२॥

[दीपकके सम्बन्धमें आशु पद्य]

‘ना सोदर्युल दान धर्मपटिमन् ना तंङ्गि गांभीर्यंवि
द्या संपन्नतचे जयिच्चितिवि नेना मुझे नीकीर्तितचे
गांसि जेंदितिक्रोवु’ मंचु शशि यी कालम्मुनन् दीपमे
ता सेविपवच्छे गनोनुमु सीताराम भूपालका ! ॥३॥

‘दिव्ये वेलुंगुचुंडिन गबिन् नलुबंकल दोचे जीकटुल् ।’

‘जव्वनमंडु नोक्कडु भुजंगुडु सैपगरानि वेदनल्
निव्वटिलंग नोक्क तरुणीमणि गूच्चि जपिचुचुंड ना
जव्वनि येगुवेंचे विलसत्कवरीभर नव्यकान्तिचे
दिव्ये वेलुंगुचुंडिन गबिन् नलुबंकल दोचे जीकटुल्’ ॥४॥

११. समस्या-पूर्ति

‘गान-जैसी विद्याको देख नहीं पाएँगे ।’

ज्ञानविहीनोंको और ज्ञानियोंको भी सन्तुष्ट करनेवाला, रागशून्य मुनियोंको भी सन्तुष्ट करनेवाला, क्रूर सर्प समूहको, सर्व पक्षि-सन्तानको, बच्चोंको और मृगोंको सन्तुष्ट करनेवाली गान-जैसी विद्याको देख नहीं पाएँगे हे वेंकट कृष्ण भूपति ! ॥१॥

‘रागोंमें मेघ मल्हार है ।’

हे वेंकट कृष्ण राजा ! वस्तुएँ तीन श्रेष्ठ हैं, हाथियोंमें ऐरावत, योगमें लम्बिकायोग और रागोंमें मेघ मल्हार ॥२॥

[दीपके सम्बन्धमें आशु पद्य]

मेरे सहोदरोंके (नक्षत्रों या मणियों) दान-धर्मकी-पटिभा को और मेरे पिता (सागर) को गम्भीर विद्या-सम्पत्तिसे हरा चुके, मात कर चुके । तुम्हारी कीर्तिके कारण मैंने बड़ा दुख पाया (वह कीर्ति) मुझसे बढ़-चढ़ गई । हे सीता-राम भूपाल ! यह कहते शशि इस समय दीप बन तुम्हारी सेवा करने आया है ॥३॥

‘दीपकके जलते रहनेपर भी कमरेमें चारों तरफ अँधेरा छा गया ।’

यौवनके समय कोई विट (जार पुरुष) असह्य वेदनाओं-से व्यथित होते, किसी तरुणी मणिका नाम जपता रहा । उस युवतीके आनेपर, उसके शोभायमान कबरीभर (वेणी) की नव्यकान्तियोंसे, दीपकके जलते रहनेपर भी कमरेमें चारों तरफ अँधेरा छा गया ॥४॥

‘मध्याह्ने शशिमण्डलं कवलितं क्रूरात्मना राहुणा।’
पद्मव्यूहमुपागते गुरुवरे तस्मिन्प्रविष्टं रया
च्छूरं पार्थसुतं जघान गदया दौशशासनिः क्रूरया
दृष्ट्वा तद्वदनं गदाविकलितं प्रोचुर्मिथो निर्जरा
‘मध्याह्ने शशिमण्डलं कवलितं क्रूरात्मना राहुणा’ ॥५॥

‘मध्याह्न समयमें ही राहुने शशिको कवलित किया।’

गुरुवरकी रक्षामें सम्पन्न पद्मव्यूहके समीप आकर, उसमें प्रवेश करनेपर पार्थ सुत (अभिमन्यु) पर लक्ष्मणकुमारने क्रूरताके साथ गदा-प्रहार किया। उस गदा-प्रहारसे विकल अभिमन्यु कुमारके मुखको देखकर, देवताओंने सोचा कि यह मध्याह्न कालमें ही राहुने शशिको कैसे कवलित किया ? ॥५॥

—————

